

श्री रोहिणीव्रत कथा
और
रोहिणीव्रतोद्यापनम्

रचयिता—

प० पद्माला जैन साहित्याचार्य 'वसत-सागर' ।

प्रकाशक—

मूलचन्द्र किसनदास कापड़िया,
दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गांधीचौक-मुरत ।

प्रथमवार । वीर स० २५७७ । १० ।

मूल्य—चारह आन ।

स्व० सेठ किसनदास पूनमचद कापडिया

स्मारक ग्रन्थमाला—सूक्त न० ७



हमने अपने पुज्य पिताजीके स्मरणार्थे धीरे स० २०२६ म० २००७) आपके नामसे एक स्थायी ग्रन्थमाला प्रकट करनको निकाले। जिससे आमतक ६ ग्रन्थ प्रकट होकर 'दिगम्बर ज्ञान' परफे माहकामो भेंट किया जा चुका है निम्न नाम हैं—

- १—पनिताकारक जैनधर्म (कामताप्रसाद जैन) १॥
- २—संक्षिप्त जैन इतिहास २ भाग, छि खंड १॥
- ३—पंचस्ताव संप्रद सार्थ (वसंत) ॥=
- ४—भगवान बुद्धकुदाचार्य (कामताप्रसाद) ॥
- ५—संक्षिप्त जैन इतिहास २ भाग चतुर्थ खंड १॥
- ६—जैनाचार्य (३३ आचार्योक्ति चरित्र) १॥=

और यह सातवां ग्रन्थ रोहिणीग्रन्थ कथा व उगापन जिसकी रचना श्री प० पन्नालालजी जैन साहित्यागार्य वसंत (मागर)न की है, वह प्रकट किया जाता है और दिगम्बर जैनधर्म २०२६ वर्षके माहकामो भेंट दिया जाता है।

यदि किसी ही जनक स्मारक ग्रन्थमालाके निम्न समानमे स्थापित हाकर उनके द्वारा पितामूल्य या अन्य मुन्यम नमीन ग्रन्थ प्रकट हात रहें तो अप्रकट दिगम्बर जैन साहित्यका अभिवाधिन प्रचार हा सकगा।

सूक्त धीरे सं० २४७७ } सूत्रचर किसनदास कापडिया
ता० १-५-५१ } प्रकाशक।

शुद्धिपत्रम्-रोहिणी व्रतोद्यापनम् ।

पृ०	ला०	अशुद्ध	शुद्ध
१	१२	विघातना	विघातव्या
२	५	वींदवस्थायिन	धींदवस्थायिन
३	७	निखरो	निखरी
३	१०	झापु	झापु
४	११	तञ्ज	तन्व
६	७	कान्ते	कान्तम्
६	८	रुढ	रुढ
६	११	श्रीमत	श्रीमन्
९	८	कलात्मकन	फलात्मरन्
११	१७	पूणाघेण	पूणाघेण
१०	५	दीप	दीय
११	११	पक्षे	सपक्षे
११	१५	नगरदना	नगरदना
११	१७	दीवापति	दीवापति
११	१	पतभवर्न	पतिमयन
११	७	मनलं	ममल
११	१५	संपाना	सयाता
११	१६	विवित्र	विविध
१२	१५	य	म
१४	५	पिडन	निडन
११	११	पीडन	पीडन
११	११	पीडन	मीडन
११	७७	सयत्न	सपन्न
१५	१०	देवशं	द्वय

न०	ला०	अनुद	शुद्ध
११	११	राहत	रान्ते
११	१२	नहि	त्रि
१८	१	निरुत	निरुत्त
११	७	तत्पीति	मत्पीति
११	२०	मुदाह	मुदाहं
१९	६	जिने यज	जिनं तं यज
११	१२-१८	भन	यज
२०	७	प्रदीपे	प्रदीपे
२१	१८	ममराय	समराय
२२	१२	नश्यती	नश्यता
२४	३	दयो	दथा
११	८	धन्याभाम्वा	धन्यभाग्यो
२५	२	लोलित	ललित
११	७	पादो	यादा
२७	१	फलान	फलानि
२८	४	मन्निधो	सत्तिधो
२९	१९	विष्ण	विष्णु
३०	४	चद्रे	चक्रे
११	१०	रम्ये	रम्ये
३२	१८	रफ	रफ
३५	९	पञ्चन्द्रिक	पञ्चमन्द्रिक
३६	१८	मामिनी	मानिनी





श्रीरोहिणीव्रत कथा ।

श्रीद्वारपेणाच र्यकृत मस्कृत कथाका हिंदी अनुवाद



वृ भादि सुधीयातान् जि नानम्य भक्तिः ।

गहिणव्रतकारणवदये मया यथागमम् ॥

मृगप्रदान तच्छह नात्ता त्रिगाल नगर है । इसमें सम्य
 त्तमसे शोभामान रा । शणि रा य करत थ । इनकी
 आशिर प्रसिद्ध रत्ना नामकी महादमी थी । इनके वारिपेण
 गनका पुत्र था जो थावर था और विद्वानांम अतिशय प्रसिद्ध
 था । एकदिन राता शणिक विपुलाचल पर्वतपर स्थित बारह सभा
 आसत युक्त थी वरमात्र्यामास समीप पहुँच और देव, अमुक
 तथा मनुष्यादि द्वारा स्तुत और समस्त कामका श्रय करनेवाले थी
 वरमात्र्यानामो भक्तिपूर्वक प्रणाम कर उनसे यह वृत्तन लग जि
 ते स्वाभिन ! आपका समान तीव्रर कितन है, तथा चक्रवर्ती,
 ब्रह्मर, गरवण और प्रतिनारायण कितन ह ! तमा हा अन्यत्र
 क । है कि ह नाव ! आपका समान चितने इ कितन है ? चक्रवर्ती
 कितन ह ? बलभ जीरारायण कितन है ? तथा इनके गजुभूत
 प्रतिनारायण कितन है ? ह स्वाभिन ! यह सब मुझसे कहिये ।
 ह चिनेन्त ! ह परिश्र ! ह त्रिभुवास्तुत ! मैं इस समय आपके
 प्रसादसे सब जाना चाहता ह ।

मगराज-राजा श्रेणिमर दचन मुनर श्री वर्धमान तिनद्र
 कौतुक युक्त चित्तशाल राजा समक्ष उन प्रानातुत्तर कदा
 'गो-ह राचन' समस्त पृथिवीक अधिपति तीर्थर चौबीस
 कहे गये है तथा 'अरुनी' उनस जाय अयात धार, नलभद्र नौ
 नारायण नौ, और दुष्ट कार्योमे युक्त प्रतिनारायण भी नौ कहे
 गये है । उम प्रकार श्री कपभ आदि तीर्थकरों पुराणोंका कथा
 परन हुा श्री वर्धमान तिनद्र अङ्गनाम पधार । कदा उन्होंन कदा—

इम अङ्गनाम चम्पापुरी नामकी मनोर नगा है, जो
 हमशा मनुष्योंमे व्याप्त रहता है । एक किसी समय इमक राजाका
 नाम धनुष्य या जीर नारीका गया । इन दानाक भय्य जीवोंको
 आतन् दनगला, रूपवान और बत्तीम लक्षणाम सहित
 धनुष्य नामका पुत्र हुआ था । तारद्वे तीर्थर स्वामी उन
 श्री दानुष्यस्वामीका गुणरूपी राजा रमूहम मरा हुआ य
 पुराण मुनर रा ने उमृतपत्र नामक प्रथम गणपरस य पुराण
 पूठा । कौतुमे व्याप्त है चित्त तिमका एसे राजा श्रेणिमर
 दचन मुनर श्री वर्धमानस्वामी, मामन बैठ हुा श्रेणिमर इम
 प्रकार कदा लग—

जम्बूद्वीपमे स्थित इन्दी भरत क्षेत्रमे धा जीर धायमे सहित
 एक कुम्भाङ्गल नामका दग है, उममे 'गणिक' लंगांस मरा हुआ
 अतिथय श्रेष्ठ हस्तिनापुर नामका नगर है । वीतगोर दहाना राजा
 था जो मनुष्याका अन्त प्यारा था । इम राजाक दिगुत्प्रभा
 नामकी प्रिय महारानी थी और अंगोर नामका पुत्र था जिसका
 पीर मदा शरुम दून्य राज था ।

शोभा लम्पन्न जङ्ग नामक महादशम एक कम्पा नामकी
 श्रेष्ठ नगरी थी । इन मधरा नामका राजा राज्य करता था और
 उरुषी श्रीमती नामकी रानी थी । उरुष आठ पुत्र ध जा गुणोंकी

रत्न ४, समस्त पृथिवीतलमें प्रसिद्ध ४, तथा निम्नलिखित नामोंको धारण करत ४ । लक्ष्मीका प्रिय १ श्रीपाल, गुणप्रिय २ गुणपाल, विस्तृत धनका धारक ३ वसुपाल, प्रनाका ४ श्री ४ प्रनापाल, प्रतापी धारण करनेवाला ५ प्रतपाल, लक्ष्मीका धारक ६ श्रीवर, गुणोंमें पृथिवीतलको अनुसक्त करनेवाला ७ गुणवर और यशका धारक तथा यशमें आकाशको संपद करनेवाला ८ यशवर । यथाथ नामका धारण करनेवाले ये सभी पृथिवीतलमें अतिशय शोभायमान रहत ४ ।

इसी मंत्रवा रात्राकी रूप खीरन रुम्पन, स्थूल उठ हुए तथा मद्यन स्तनमि युक्त पंच कलाकी आधार राहिणा नामकी प्रसिद्ध ञ्ज्या थी । पन्द्रवार रोहिणी कार्तिर मामकी अष्टाह्निकामे उग्रवास धारण कर चन्दन नैत्रय पुष्प धूप तदुल आदि पूजाकी मामग्री लहर चम्पानगरीकी पूज दिशाम स्थित महापूजाङ्क नामक अतिशय उच्च तिनालयमें पहुँचा । वहाँ भस्तिपूत्रक पुष्प गन्ध अक्षत आदि तिन भगवानकी उड़ी भारी पूजा कर उसमें श्री जिनन्द्र-द्वय और माधुजामा नमस्कार किया, फिर शेषाश्वत लहर तिन मन्दिरसे बाहर आ, और समाप्त मध्यम स्थित माता पिताक लिये तम अत पुरक अयन्नोंर लिय भी उसमें बड़ शपाश्वत न्य ।

पितान कन्याका इस्कर अपनी मात्में बैठाया और उसे ची न रूप हस्तीको प्राप्त अथात् नूतन ताण्ण्यरती एवं प्रौढ धर्य कर कुट्ट त्रिपाल युक्त हो उस प्रकार चित्ता की कि अत्यन्त रूपस सम्पन्न पञ्च नययौन वाली यह कन्या गुण और रूपसे समानता रखनेवाले किम युवाको दूगा ।

ऐसा विचार कर रात्रा अत्र कुछ निश्चय न कर सर तर रात्रा कन्याको तो घरक प्रति विदा किया और आप स्वयं शीघ्र ही त्रिपाल मन्त्रालामे प्रविष्ट हुए । वहाँ उसमें बुद्धिमान कुमति १, श्रेष्ठ तथा शास्त्र शान सहित श्रुतसागर २, बुद्धिक ४ श्री

विमलमति ३, और विमल अभिप्रायक धारक विमल ४, इन मंत्र करनेमें अत्यन्त निपुण चारों मन्त्रियोंको बुलाया और जब वे यथायोग्य आसनापर बैठ चुन तब रातान उनमें यह पृच्छा—

हे मंत्र करनेमें चतुर मन्त्रियो! आप लोग निश्चि होकर कहिये कि यह सुकुमाराङ्गी रोहिणा कुमारी किस कुमाङ्के लिये दी जाय ?

इस प्रकार रातान वचन सुनकर अन्य मन्त्रियोंके द्वारा प्रेरित हुआ सुमति मन्त्री समझे पहिल रातका इष्ट लगनवाले वचन बाला-ह रातान । यदि यह कथा किसी एक कुमाङ्के लिये दी जाता है तो सम्भव है कि हमारा प्रेम सम्बन्ध उस पुरुषमें ही तथा न । भी हो अथवा वैशेष्यम् उस शुभागी पुरुषकी इस कुमारीमें प्रीति न हुई तो मातापिता क्या करेंगे ? इसलिये यह कन्या स्वयंवरमें जनक राताना समागम रहन अपना इष्ट पतिको ग्रहण कर सता मरा विचार है । स्वयंवरका दक्षिण पक्ष राताना आन्तरपूजक सप्तम का है, इसलिए जो बात पहलेसे चली जाइ है उसमें करनेमें पुरुषोंका लज्जा नहीं होती ।

सुमति मन्त्रीकी बात सुनकर राताना भीतर ही नागा मणिकामे सुगाभित सुनण निमित्त अतिशय उच्च कराडो रिहासन दादाय और शीघ्र गमन करनवाल अपना पुरुषा द्वारा इस समस्त प्रथिना-स्त पर उसी समय स्वयंवरकी घोषणा करा । वैभङ्गा रातान वृता द्वारा स्वयंवरमें समाचार सुनकर शोभायुक्त चर १५५ आय और मन्त्रांतर आरूढ होगये । उन र... तालसे बचनेवाल पर पृथिवी और करनवाल पुढा दान म... प्रस्तन है चिन्ता विमल... दाससे छू रहा था, को... का... आरुण कन्या... ।

अपने हाथसे खिन्न बालोंके समूहको शिरपर निश्चर कर रहा था, कोई मृगाक समान कान्निगाटे ओठको हाथसे कुछ रींचकर एक आँसुस टप रहा था और दूसरी आँगमे दिशाक मुन्वकी ओर टप रहा था, काइ, निसन अपनी सुगन्धम भ्रमरोंको आसक्त कर रखा है, निमन समस्त निशाजाना सुगन्धित कर दिया है और निमका अन्न भाग रिल रहा है ऐसा ब्रीडा कमल अपने हाथमे कर रहा था, काइ धाणा लेकर मान म्वर्रास युक्त तथा वज्राम मूच्छनाआमे सन्ति सुन्दर गात गा रहा था, काइ कुछ तिरग्री तथा सुन्दर पट्टीमे सान्द्र गये चमकती हुई छुरीको नितम्ब स्थल पर नांव रखा था, और कोई प्रमत्तचित्त राजा हाथस पान लेकर अपने शत्रुमे प्रथिनी और आकाशकी भरता हुआ सदसा हँस रहा था। उस प्रकार उन समय निमन चित्त कामसे व्याकुल हो रहे हैं और जो कथान आगमनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं उस सभी राजा विविध प्रकारका क्रियाण कर रहे थे।

उपर राजाआमी एमी चष्टाए हा रही थीं, उपर महामृत्य चञ्चोंका धारण करनेवाली, सुन्दर आभूषणाम विभूषित, सौन्दर्यसे निसन प्रत्येक जङ्ग सुगन्धित हो रहा है, मन्मत्त हाथीक समान निरुकी चाल है, पाँच वणक फूलमे उनी माला निमक हाथमे है और जो वायक आग चल रही है एसी रोहिणी कथाने स्वयं-चर मण्डपम प्रवेश किया ।

निसन चित्त कामसे व्याकुल हो रहे हैं ऐसे सभी राजा उस कन्वामा मन्वजर मण्डपमे आइ हुई दग्कर नित्र प्रकार वारवार चिन्तन करन लग गि यह क्या यश्री है कि किन्नरी है कि त्रिगाएकी पुत्री है, कि उर्वगा है, कि इन्द्राण है, कि रणि है, कि तिगन्तमा है? एम तरह उहुत प्रकारक पितक करन हुए राजा विचिन्तन चित्त हाकर बैठ हुए थे। उस समय उन सभीक नेत्र रोहिणीक मुख कमल पर लग रहे थे।

अगान्तर कोकिलक समान मधुर स्वरवाली तथा सोनरी छड़ी हाथमें धारण करनेवाली सुमङ्गला नामकी मानवती धात्री कन्यासे बोली-ह कुमारी ! महाकुटुम्बपुरक स्वामी, कुन्त वृद्धक समाग दोतावाल कुन्द नामक इस सुन्दर राजकुमारको घर ! यह मङ्गपुरका स्वामी है, सुवर्णक समान इसका शरीर है, हम इनका नाम है, बहुत भारी सुवर्ण तथा धनका आधार है । ह मनस्विनि ! तू इसे सम्मानित कर । जिसका समस्त शरीर रत्नास प्रकाशमान हो रहा है एसा यह रत्नसचय नामका रत्नपुरका स्वामी है । ह धार ! तू अपना मन इसमें कर ।

यह तिलक नामक नगरका स्वामी है, तिलक इसका नाम है, राजाओंक मन्थन तिलकक समान है । ह प्रिय ! तू इसमें प्रीति कर । यह त्रिशुलपुरका स्वामी है त्रिशुलप्रभ इसका नाम है । ह मानिनि ! तू इस भोगीक माय भोगाको सम्मानित कर । इस प्रकार सुमङ्गला धात्रीक द्वारा तिनरी सम्पत्तों दिग्गलाइ गई हैं एसे बहुतसे राजाओंको उल्लेखन कर उन सबपर द्वेष धारण करती हुई रोहिणी शीघ्र ही आग बढ गई ।

उसके हृदयका अभिप्राय जाननेमें निपुण पतिव्रता धात्री समस्त राजाओंको छोड़कर आग बढी हुई रोहिणीसे प्रसन्न बचनो द्वारा इस प्रकार फिर बोली-ह स्वामिनि ! यह गुणाका आधार धीतानक राजाका पुत्र है, अनिश्चय श्रेष्ठ है, स्वयं कामन्दका जीत रहा है, शौर्यसे रहित है और जशाक इसका नाम है, ह पुत्र ! द्रवक समान रूपको धारण करनेवाल अपना पितावर तुल्य इस विलासीक माय तू चिरकाल तक सुवर्णका उपभोग कर । धात्रीक बचन सुनकर रोहिणीने उसका सामने स्थित, स्वयंका प्रिय स्नानवाले तथा कामन्दक समान सुन्दर उम अशाशकुमारको देखा । उस सुन्दर आंगणका दरप कर कन्या श्वण मात्रमें मोहको प्राप्त हो गई, और फिर चतना प्राप्त कर विस्मित चित्त होती हुई

विचार करने लगी कि यह मेरे आग क्या शरीर सक्ति कामदेव सुशोभित हो रहा है? कि इन्द्र कि त्रियाघरोंका राजा, कि भोग भूमिमें उत्तम हुआ कुमार । अपन चित्तमें हरण करनेवाए उस युवाको मनरूपी मालामें अन्धी तरह बांध कर रोहिणीमें पीछे उम अशीषक गलेमें माला छोड़ी ।

उम समय वीतशोक पुत्र अगामको कन्याकी मालामें विभूषित दरवार अन्य सब राजा अपन घर चल गये । तिनका ज्ञानाकरणकि कर्म क्षीण होचुके हैं, तिनका फलज्ज्ञान ही नम है और जा समस्त पत्नीको जानत हैं एम श्री तिनन्द्र दरकी अतिथय पत्रि महापूजा कर शुभ ति तमा शुभ यागादि समय मधरा राजा द्वारा प्रकृत रोहिणीका अगोमन बडे अनुरागमें विभूषण किया ।

रोहिणीका साथ चन्द्रमाल समान मनोप्रभित भोगाको भागता हुआ अशोक राजा वहाँ सुरम रहने लगा । पिता वीतशोकने यद्यपि बहुतसे पत्रे भजे, तथापि रोहिणीका स्नहसे अशोक पिताके पास नहीं जाता था । एकवार अशोकके पितान अत्यन्त उत्सुक होकर किन्ही स्तुतिपाठक (चारण)के हाथ परिचायक चिह्नका साथ शीघ्र ही पत्र भजा । उस स्तुति पाठकने चम्पापुरी जाकर वीतशोक महाराजकी स्तुति कर उनका पत्र अशोककुमारके आग रख दिया । अपन हाथमें पत्र लेकर और उसका अर्थ बाँचकर पिताके दर्शनके लिये उत्कण्ठित अशोक गाकस युक्त हो गया ।

तन्मन्तर अशोक इत्यनुसे पृथकर रोहिणीका साथ ले अपनी मना सहित क्रमसे पिताके समीप चला । वहाँ पहुँच कर अशोकने सभामें स्थित पिताको तथा माताका नमस्कार किया और इस प्रकार पिताके समागमसे अशोक पुन शाकत रहित हो गया ।

अथानन्तर एक दिन वीतशोक महाराजने ब्यालाअसि आकाशको प्रशिक्षित करनेवाही उल्ला देरी । उल्लापात करके तिनका

हृदयम धैर्याय उत्पन्न हुआ है उस महाराज कीतशोक दिग्गज अञ्जलि वांछ हुण समासदमि इस प्रकार कहन ह्य—

ह मभसत् हो ' प्राणियाका नीदना त्रिवर्तीक ममान चङ्ग है, मधुर भोजनम पातिव शरीर दग्ग ० नष्ट हा जाता है, ये मराग आदिक् समत् म्भव पत्ताक् ममान आभाज ल है, प्रिय स्वाजनार साथ प्रीति संयाकालकी लकीक ममान है, वधुजाय साथ जो प्रम है वह स्वयं राज्यक् समान है, इस संसारमें वह वस्तु है ही नहीं जो स्थिरतामा प्राप्त हो ।

उन समासदमि एसा कहन तथा इष्ट था यदन्तसि एष्टवर और अशोक रिय राय लक्ष्मी देकर कीतगार महाराज घरमें निरग पड़े । उस समय गुणर नामक मुनि अशोककर मर्दम विराजमान थ, कीतगोर महाराजन घड़ी भक्तिक् साथ पास जाकर मन्प्रियगाली उन मुनिराजनो गररकार किया और बहुतसे ऋष्ट मनुष्यार साथ जाकर पाव नीता प्रष्टण की । मुनिराज धान्शाक् अन्यन्त कटित तप कर तथा कर्मोसा नागरर ईष्ट ही नियोग धामना प्राप्त हु ।

वित्तानी लीश्यासे उत्पन्न हुण महाराजको नष्ट कर राजा अगाकने अपन राज्यका विक्रन किया, तथा समस्त राजाजारो तत्रीभूत किया । राजा अगाकर साथ मनोहर भोग भागी हुई रोहिणीक् क्रमसे पाठ निर्मेठ पुत्र उत्पन्न हुण । इमी प्रकार द्योन्तमे सम्पत्त कमलदलर समान नगोत्राली चार पुत्रिया भी क्रमसे उत्त हुँदे । पुत्र और पुत्रियाक् नाम इस प्रकार है—दिग्गशाक १, गन्ताक २, तितशोक ३, त्रिनष्टशोक ४, धनराक ५, वस्तुपा ६ और गुणकी गान गुणपाल ७ ।

इस प्रकार विद्वानोंक द्वारा रोहिणीक् सात पुत्रार नाम जानने योग्य है—वसुधरा, सुररान्ता, लक्ष्मीमती और सुप्रभा ये चार

पुत्रियां वीं । रोहिणीव्रत इन सप्तम पुत्र पुत्रियां वाद एव लोकापाल-
कुमार नामका आठवां पुत्र हुआ जो रूपम सुशोभित था ।

सिन्धी एक समय अशोक राजा, बुद्धिमन्ती रोहिणी, और लोकपाल नामक छोट पुत्रका गान्धर्व लिये हुए धन्वन्तलिका नामका धाय य नीना महलके अग्रभाग पर मनोहर कोला ल करत तथा गोष्ठीसुगन्धका उभयभाग करत हुए सुगन्ध बैठ हुए थे । उसी समय मागम कुटुम्बी विद्या निकली जो शाकम् बुन था तिनके पगार समूह सुन हुए थे जो कालाटल कर रही थीं, मण्डल गगनर गड़ी हुई थीं, राम कर रही थीं, जवन दागन्धका धारदार पुमारती वी, उल्लस्यल, गिर, स्तन और मुवाज्राका कृती हुई स्तन कर रहा थीं ।

महल पर बैठ बैठ गीर्जन लत्र इन स्त्रियांका दन्धा तव कौतुक-
पत्र -मन्तलिका नामकी धात्रीम सम प्रकार पूछा—ह अन्य ! नृत्य विद्याय जानकार विद्वान मिश्रक, शानी छत्र राम और दुरविनी इा पांच ता शारा नृत्य करत हैं परन्तु भरतायायक द्वारा कह हुए इन पावा नामकाका छाड कर इन स्त्रियां द्वारा यह कौतुमा नायक मिया का र्ण था, जो गिर आन्ध्र कृत्नस मन्ति है । निपात्र, श्रयम जानि मान स्वगम मन्ति तथा भाषा और स्वराय चदाय गारम मन्ति यह गार्क गुणम कन्थि । मुझ इम समय इम विषयका कौतुक हा रहा है ।

नायकम भर हुए रोहिणीव्रत वचन गुन कर धन्वन्तलिका धाय नाम वाली—ह पुत्रि ! इन दुग्गी चर्चोर द्वारा यह जान तथा म लत्र नृत्य किया जा रहा है । यह मुन रोहिणी कौतुक था उनम फिर गाला—ह माता ! शोक अथवा दुःख क्या कलाता है ? सुगन्ध कह । अबनी धार धाय कुद्व दोसर तरा शायम लाल लत्र आन्ध्र करती हइ वाली—ह मन्थरि ! क्या पुत्र उमात्र हो गया है, या तग एसा पाण्डित्यका धनत्र है ? या रूपम उत्पन्न हुआ धमण्ड है या लाकातर मौभाग्य है विसम नृ

इसे स्मर और भाषास मलिन नाम कन्ती है? तू शोक और दुःखही नहीं जानती? जान पड़ता है कि तू आन ही उपन हूँ है ।

वसन्ततिलकाव वचन सुनकर रोहिणीन उमस फिर कन्ती-
ह भद्र! मुझ पर शोध मन कर। सगीत, गणित, विज्ञान, अस्त्र,
स्मर, चौमठ प्रसारक विज्ञान और वस्त्र प्रसारकी कथा इन
सबका मैं जानती हूँ पद्यों कभी कदा, रूप, गुण जान तब मुझमें
किमीन नहीं कदा। यद गुण पाएँ मैंने कभी न दया है न
सुना है। इसलिये आपस प्रती हूँ ।

रोहिणीव्रत वचन सुनकर धायन उमस फिर कन्ती-
पुति! यद न नामका प्रथाग है जात न संगीतमयी भाषाका
स्मर है। किन्तु इष्टजाती मृत्युकर मरण दुःखम रोनेवालीयोंका
शब्द है। ह वरस! मैं फिर कन्ती हूँ कि यह शोक कदलाता
है। धायक वचन सुनकर रोहिणीन उमस फिर कन्ती-
ह भद्र! मैं रोनेका अर्थ नहीं जानती अत वनयाओ कि यह क्या होता है?

रोहिणी और धायन यह घातालाप हो रहा था कि वीरम
हा अशोक राता रोहिणीसे ताएँ मैं शोक का कारण तुझ रानका
अथ अन्ता तरहसे निगयता हूँ। यह कन्ती रानान गायन
हायस कर जालक लालकालका रोहिणीव्रत दरत मयन शीघ्र हा
मडलकी उठा परत नीच ग्राड दिना। बालक लालका, अशोक
शुभ्रकी चोरी पर जगार मृशक प्रलामे वरी हुई गथा पर पडा।

उपन नामका वहाँ पडा चान्दर नगरक सभी शता
कालाहल करत हुए उम मयान पर आ पहुँच और कहन गग कि
रोहिणीका एसा शोकका कारण क्या उपन हुआ? वद प्राप्त हुए
शोक और दुःखका वद ही नहीं पाई थी कि उपन पदक ही
नगरक दक्ताथान अशोक शुक अमभाग पर स्थित पाव

प्रकार का रत्न उभरल दिव्य सिंहासन रख दिया । उस सिंहासन पर बैठ हुए बालक का दरतार्जन रत्न और सुवर्ण बने, क्षीरसागर जलसे भर और कमल पुष्पों में आउत्त मुखवाग्वक्त्रों आठ कर्णों द्वारा अभिषेक किया, तथा उस बालोचित आभूषणों में विभूषित किया । इस प्रकार थाऊर कीड़ा करता हुआ उस अशोक वृक्ष शिखर पर विद्यमान था ।

उस रात अशोक नीचरी आर झाँसा तो क्या दरत हैं कि रोहिणी का बाल अगोर वृक्ष की चाँगी पर सिंहासन में विराजमान है, अपनी गङ्गा दिशा आकाश सुगन्धित करनेवाले पुष्प तथा धूप आदि उसकी पूजा ही रही है, देवता अपने हाथ में स्थित करणों में उसका अभिषेक कर रहे हैं, और दिव्य आभूषणों में विभूषित किया गया है । यह वृक्ष सदा प्रसन्न गहनपाल महाराज, महासुद्धिमान सखीण मन्त्री, महाराज अगोर, प्रम करनवाली रोहिणी तथा पुरोहित आदि सभा लाग पूज्यमान रोहिणी द्वारा रिय हुए उनका और उक्त फल में परम आश्रयका प्राप्त हुए ।

तदनन्तर आश्रय भरा हुए व मय लाग देवापनीन सद्य आभूषणों में सुभूषित उस बालक पास आनन्द में स्थित हुए । नागराज, चम्पक, अगोर, नमक और मौलिश्रीक वृक्षों में व्याप्त तथा आम एवं भिलाया आदि वृक्षास सम्पन्न म अशोक वन में अनिर्भूति, महाभूति, विभूति और अम्बर तिलक नामक चार विनामदिर व । उमी समय स्यकुम्भ और सुवर्णकुम्भ नामक दो चारण ऋद्धिधारी मुनिगण विहार करत हुए हस्तिनापुरनगर के पास, और पृथ्विनाम समुत्पन्न महान्त महाभूतितिलक नामक विनामदिर में विराजमान हुए । तदनन्तर व घड़े बगल पास आकर रात अगोरक लिय मुनिराज का सद्य व्रतान्त कहा । वनपाल वचन सुनकर भक्तिसे राजा शरीर में रोमांच उठ आय । वे बड़ धैर्य साथ मुनिराज समीप पहुँचे । पहुँचने के बाद राजा अशोक दोनो मुनिराजों की

चन्द्रनाथी, और फिर अग्रविद्वान्नी रूप्यकुम्भ नामक मुनिरानस विधिपूर्वक पृष्ठा-ह प्रभो ! वतन्गड्य क्रि मेने और रोहिणीने पृष्ठभयम समस्त जीवामी दयामें तत्पर कौनसा पवित्र धर्म धारण किया था ? इमर सिपाय ह म्यामिन् ! त्रिशोक आठ पुत्रा तथा चार कन्याओं पत्रिप पूर्वभयक सम्बन्ध भी मुझसे कहिये ।

राजा अत्राक्षय वचन सुनकर मुनिरान रूप्यकुम्भ अग्रविद्वान्नी नामसे मन बात ज्ञात कर इन प्रकार कहन लगे- ह राजेन्द्र ! मैं सक्षेपसे आपकी स्त्रीय अशोक (दुःखाभाय) का कारण कहता हूँ उसे एकप्र चित्तसे सुनो—

हस्तिनागपुरस गण्ड योचन माग चल कर एक नीलगिरी नामका पर्वत है जो जलियाय इचा और अनन्य कृष्य तथा जिला-तगतस युक्त है । उस पर्वतकी गिरपर एक यज्ञाश्रम मुनिराज जानाया योगस स्थिर रहन व । यह मुनिरान मरुत्प शत्रुआम लडनेसे गिर ३, चारण ऋद्धिधारी ३, लोकस शान्ति उ रत्र करन वा ३ थ, सर्वोपधि ऋद्धिजा प्राप्त ३, उनका शरीर वमम भूपित था, व मानापयाससे युक्त व और उका मज जत्यन्त स्थिर था । किसी एक समय मृगमारी नामसे प्रसिद्ध एक भयकर शिकारी मृगाका मारनक लिये उन नीलगिरि नामक पर्वत पर गया ।

मुनिरानर माहात्म्यसे यह शिकारी मृग मारनक लिये असमय हो गया, उसर मन बाण ज्यय हो गय । यह दृश्य कर उमने विचार किया कि मैं कभा व्यय नहीं जाननाएँ अपने इन बाणाम मामने स्थित मृगाको मारनक लिये ममर्थ नर्दा हो पा रहा हूँ इमसे क्या कारण है ? कुछ समय बाद तत्र उसकी शक्ति कुछ दूरीपर स्थित मुनिरान पर पड़ी तत्र उसने शीघ्र ही जान लिया कि इन मुनिरा प्रभायसे ही मज बाण निष्फल हुए हैं ।

यह मुनिरान पारणाक लिये जब तत्र नगरम गय तत्र तत्र उन शिकारीने आकर मुनिरानर बैठनेकी शिगको कृण तथा कायस

जलाकर उसे भस्म तथा अद्वारान समूहमें सूत्र गरम कर दिया और मय मृगोरो माननी इन्डामे अन्यत्र जाकर स्थित हो गया । मुनिराज पारणा कर मन्द मन्द गतिमें चलन हुए इस शिकारी द्वारा अग्निम तपाई हुए आतापन शिला पर पहुच । यद्यपि पासम पड़ हुए अद्वार आदिम मुनिराजने जान लिया था कि यद् गिगा गरम की गई है, तथापि निमल धुद्धिध धारन मुगिगन सदाय त्रिय आद्वार पानीका त्याग कर अथात मन्यास धारण कर उस गिलापर आम्बट हा गय और अन्तःस्त्रजला होकर समस्त सुर असुरों द्वारा नममृत हात हुए ममस्त पमोसि निमुक्त हा मुक्ति-लक्ष्मीका प्राप्त हुए ।

उदुम्यग नामक कुष्ठमे निमना समस्त गरीर मड गया है एता वह शिकारी मार्ये त्रिन मृत्युकी प्राप्त हुआ और मरकर मुनि हत्याक पापम सार्ये नरक गया, यहाँ उसकी तीस मागरकी आयु था । य गिगारा नड दुग्मेसे सातयें नरकम गिरर कर दुग्मे दनशाला त्रिध्वगलिभा प्राप्त हुआ फिर मनुगगतिम धन्या करता रहा ।

इमा मनाय हस्तिनागपुर नगरम वद्वत नाग गागामे त्रिभुक्ति गागादृष्टी गामसे प्रलिद्ध एक गागाय रहता था । उसका स्त्रीका नाम गागाया था । य गिगाराका तीर यजा गनरक वृषमस्त नामका पुत्र हुआ । सिमी दिन दह जवान हान पर मात्र गायाकी रक्षा करन त्रिय नीलगेरि परत पर गया । उस उच नालगिग परत पर वह गाननस जड गया, उनका सारा गगर भस्म हो गया त्रिन यपारा नन्युका प्राप्त हुआ । थी रातीदनक त्रिय गोडुग्म आय हुए त्रिनी भिहत्तन उनक माता पिताक त्रिय पुत्रका सत्र समाचार स्पष्ट कहा । दृग्मनन पुत्रका मरण सुनकर गागारी वरुणस्वरम स्दन करा त्रिनी—ह राता । यह मैन मुगिगा दुग्मे दनशाला शकका कारण नुप्रम कहा । जय जगाक और शोधर्णका सम्बन्ध कहता है ।

हे राजन ! इसी हस्तिनापुर नगरमें एक वसुपाल नामका राजा होगा है । उसकी भायाका नाम वसुमती था । वसुमतीका भाई धनमित्र राजसेठ था जो बड़ा धनी था । उसकी स्त्रीका नाम धनमित्रा था, उन दोनोंका पृथिवी नामकी पुत्री थी । भर हुए कोढी कुत्तेके शरारत जैसी दुर्गन्ध आती है उसी ही उसका शरीरमें जमहनीय तथा समस्त आनाशका व्याप्त करनेवाली दुर्गन्ध सदा निकलती रहती थी । दुर्गन्धमें भर हुए उत्तम सभीपवर्ती स्थानमें ब्रह्मार ममान मनुष्य भी खड़ा रहकर लिये समर्थ नहीं होता था, फिर अन्य दुर्जल साधारण मनुष्यकी तो बान ही क्या थी ?

उसी नगरमें एक धनुमित्र नामका वनवान सेठ था । उसकी स्त्रीका नाम वसुमती था । इन दोनोंका एक श्रौपेण नामका पुत्र था । उस श्रौपेणका जुआ खलना, मदिरा पान करना, शिकार खेलना, परस्त्री मदन करना, चोरी करना, जीवहानि करना और मांस भक्षण करना इन चमनोंमें आनक्ति थी । श्रौपेण अग्निनीत-अशिक्षित था इसलिये मनुष्योंकी दुर्गम दनवाल इन माता व्यमनोंसे स्तन प्रीडा किया करता था । सात व्यसनका विषयमें अन्यत्र भी कहा है कि जुआ, मांस, वदया, परस्त्री, दिसा, चारी, और मदिरा ये, मनुष्यका सात दोष हैं जो अत्यन्त पापसे पूर्ण हैं और शिष्ट मनुष्य इन्हें दुर्गतिका भाग कहते हैं ।

एक दिन यह श्रौपेण चोराके लिये किसी धनवानका घरमें चुसता और अत्यन्त बड़ा मुक्त यमदण्ड नामका कालरात्र द्वारा पकड़ा गया । यमदण्डने इस दुष्ट चोरको अन्त्री तरह बांध कर नगरसे बाहर भेज दिया । जाने समय उनका आग नगाड़ना शब्द हाथा था । बहुत लागोसे फिर एवं नृदबन्धनमें बंध हुए उस श्रापणसे नगरका बाहर ले जाया जाता दण्ड धनमित्र सेठने कहा— श्रापण ! यदि तू मेरी कन्याके साथ विवाह करेगा मैं तूको बचकर ले तो मैं निःसन्देह तुझे छोड़ा दूँ । भयसे कांपते हुए श्रापणने

उसके वचन सुन कर कहा—ह मानुल ! मैं जमा ही बम्बेगा
जान मुझे शीघ्र ही बंधनमें छुड़ा दे।

मेरे धनमित्रन राजासे कह कर श्रीपण्डो शीघ्र ही बंधनमें
छुड़ा लिया और उससे यह अपनी पतिगन्ध नामकी पुत्री
विधि पूरक प्रदान कर ली। जिसका गन्धम रुध रोग भाग
जात था उस पतिगन्धको इमन विधिपूरक दिया, और सुन
तथा नाचका हक कर जिस विधी तरह एक रात्रिभर उसका साथ
रहा, परन्तु दुर्गायका दुख नइत नहीं कर सका इर्धलिय मन्त्र
होन ही नगरसे कहा अन्यत्र चला गया। श्रीपण्ड द्वारा छोटी
हुई पतिगन्धा अत्यन्त दुःखी हुई और अपने जानवरी निन्हा करती
हुई पितार पर रदा लगा।

इस प्रकार पतिगन्धका काट रोड दुखमें व्यतीत हो रहा
था कि विधी समय मुजला नामकी आदिवा मित्राथ लिये उसका
पितार घर आया। अन्त दुःखी पतिगन्धा आदिवाको दरकर
वया उन्हें किया दकर परम उपाम भावकी प्राप्त हुई।

उनी नगरमें एक कार्तिधर राजा था जिसकी रानीका नाम
कार्मिणी थी। राजा कार्तिधरन समस्त शत्रुओंका जीत लिया था।
अश्विन राजा कार्तिधर नमोके मन्त्रम विराचमान एहि धनपालन
जाकर उसकी ही ही ह राजन ! इसका धनम अमिताम्रन नामक
मुनिराजक साथ भगवान पिहितान्धन पधार ई जा धारण श्रद्धि
याग है और गिलात पर विराचमान है। दपालक बचन सुनकर
कार्तिधर राजा अपने परिवारक साथ उन लीना मुनिर्दामा नमस्कार
करनाक लिये गये। लीना मुनिर्दामा भक्तिपूर्वक बन्दना कर तथा
अष्ट धम सुनकर राजा राज ही स्वयम्भानमें मुग्धभित हो गया।

उन समय पतिगन्धा भी अपने परिवारक लोकाक साथ वहाँ
पहुंची थी। उसने दोनों मुनिर्दामो नमस्कार कर धर्मका व्याज्यान

सुता जिससे उसका भाव अत्यन्त विगुद्ध हुआ । अन्तमें वृत्तिगन्धाके दोनों हाथ जोड़ मस्तकस लगाकर दयालु मुनि युगलस अपन पूरुष पृथ ।

महार्कुराग्यक कारणभूत वृत्तिगन्धाके वचन सुनकर योगिराज अमितान्त्रय कामन खड़ी हुई वृत्तिगन्धामें कहन लग ह पुत्रि ! तू स्थिर चित्तम सुत । ह मुग्ध ' मैं मत्प्रपस तरी दुःखगन्धका कारण कहता हू ।

जम्बूद्वीपक इमा भगवत्प्रेतभ पश्चिम समुद्रक ममीप एक सौराष्ट्र नामका उत्तम देश है । उसमें उच्यतीगिन्दी पश्चिम दिशाम एक गिरिगिर नामका नगर है । उसमें भूपाल नामक सम्प्रदृष्टि राजा व उनका राणीका नाम स रणा था । स्वरूपाका शरीर रूपन शोभायमान था । इस भूपाल राजाका गद्दाल नामक एक राजसेठ था । उसकी भायाका नाम सिन्धुगती या जा सिन्धुगती रूपी पिशाचम वृषित थी । यह सिन्धुगती अपने रूपव्या रौरुषक गत्र एक सुन्दर पिशाचस मुदर स्त्री जनाकी लृणक भी तुच्छ समझती थी । किसी एक समय मातापितामी समाश्रितुन नामक सम्बन्धानी मुनिराज पारणान त्रि इस तगरम जाय । उस समय गवदत्त सेठ राजाक साथ प्रसन्न वन्द्यो जाय । उस समय गया कि जा गुनिराज एक वरस वृत्र परज्यो जाय हुए धीर धार समाग ही वरम प्रण कर । है । तत्र वसन जपती प्रिया सिन्धुगतीमे काल-क भद्र ' यथात्र त्रि सिन्धुप गुनिराज जपन कर प्रविष्ट लग ' इतिथि ह मुग्ध ' तुम इन्हें भाव करारक प टसे जानात । सिन्धुगती स्वरु कालस लोच तो गइ परन्तु बलत मृष्ट हुए । वह पगात वर मुनिराजको जपा कर र गइ । वहाँ उसका वारक गोकुल पर का प्राथम लग नत्र दर नवरा पापर लगाय लिय जम्ह जा । रल्लुकी हुई बहुरी लूझडी खडे हुए ठा मानावामा मुनिराज त्रि य आठारम व ही ।

मुनिराज सत्रक लिये आहार पानीका त्याग कर तथा आराधनाकी आराधना कर स्वर्गमें दखे हुए। निम्न समय मृत मुनिका विमानमें अधिष्ठित कर लोगों नगरक बाहर लिये जा रहे। उन्ही समय राजा प्रमद इनसे लौट रहा था। उसने किसी मनुष्यमें पूछा कि क्या बात है? राजाके दखन सुन कर उस मनुष्यने उत्तर लिया कि यह कड़ुवी तुमडी दनमाला सिंधुमतीकी चष्टा है। राजान यह सुन कर उम दुराचारिणी सिंधुमतीका गिर मुडवाया, पांच बर उसक कण्ठमें बांध, ताडनक साथ उम गधपर बैठाया और अनक मनुष्योंके सम्मुख उमे उसी समय दाल बनवा कर नगरमें बाहर निकाल दिया। मुनिहत्याके पापसे उम उट्टमर कुष्ठ हो गया, और दह सातवें दिन मर कर बाइस सागरको आयुमाल छठवें नरकमें उत्पन्न हुई। तदन तर क्रममें सार्ता नरकमें घूम कर उस पापिनीने बहुत हुए भोग। अत्यन्त भङ्कर दुःखाम भरी हुई उन नरककी पृथिवियोंमें निवल कर दह तिरश्च गतिकी प्राप्त हुई, वहाँ भी उम्का चित्त दुःखमें पीडित रहता था।

उम तिरश्च गतिमें दो बार कुतिया हुई फिर सूकनी इगाली, चूना, जटूना, हस्तिनी, गधा और गोणिका हुई। पश्चान्छित्त्यन्त दुःखमें युक्त दुःखान्वित शरीर वाली एष कंधुनाक द्वारा निम्न पृथिविगन्धा हुई है।

मुनिराजके वचन सुनकर जिसका मन स्मारक भयभात होरहा है उसी पृथिविगन्धान में प्राणियोंका हित करनेवाल मुनिराजसे फिर कहा-ए भगवान्! अब मैं किस कार्यमें पूरमच्छित पापका छान्ड सकती हूँ? सो कृपा कर मुझे कटिये। आप एके कायम समर्थ हैं। पृथिविगन्धान वचन सुनकर महामुनिराज जिनका चित्त भक्तिसे भर रहा है तथा जो स्मारक भयभीत हैं उसी उम पुत्रीसे बोल-

यन्ति त

समस्त पापसे छुकारा और

शोकस रहित द्दयराज पत्नीका प्राप्त करणा चाहती है ता गहिणी नश्वरम शीत्र ही गणाम कर निमसे तू फिर कभी दुख न करेगी ।

मुनिराजक वचन सुनकर प्रतिगन्धान क्या रि—' पाथ ! रोहिणी नश्वरमें उपवास किन् प्रसार किया जाता है ? यद सुनकर निमसा त्रित भक्ति भर रहा है और नत्र आँसुओंस युक्त हैं एमी प्रतिगन्धासे मुनिराज बोले ' पुत्रि ! पूर्ये दिन पवित्र मुनि-मागय अनुसार चार प्रकारका प्रत्याग्या प्रदण करना चाहिये, अथान चार प्रकारक आहारका त्याग करना चाहिये और निम दिन चन्द्रमा गहिणी नश्वर पर स्थित हो। उस दिन त्रिनन्द भक्ति पूर्यक उपवास करना चाहिये। इस प्रकार सत्तादस्ये त्रि न्य उपवास होता है। अथ प्रत्ये समयका परिणाम बतलाया जाता है जो इस प्रकार है। पांच वर्ष और १० दिन व्यतात होनेपर सडमठ ६७ उपवास पा जात है।

इ भद्र ! भक्त्य जीविका कल्याण करनका इस उपवासकी विधि उक्त विधिस पूण होती है। उपवास बीचर्म स्पण्डित तडी होना चाहिये। जत्र उपवासकी समस्त विधि अस्पण्डित रूपस पूण हो। तत्र तय ह और ' रोहिणी व्रतकी पुस्तक लिखयाना चाहिये, तथा अन्य पुस्तका एव शास्त्र सम्मत, धष्ट और भक्त्य समूहका दिन करनपाल धमक कारणास प्रभावना करना चाहिये। सुर और असुराक हाग नमस्कृत भक्त्य जीविका आनन्द दायी श्री वासुदेव्य जिनका प्रतिमा कराना चाहिये। त्रिमान, पताका विविध प्रकारक भृङ्गार, कल्लस, घण्टा, सिद्धिणी, दर्पण, स्वस्तिक, चन्दन कशर, अपनी मुगन्धिसे भ्रमरोंका अधा करनका पुष्प, पञ्चप्रकारका वैश्य, तथा दीप धूप फल आदिक द्वारा श्री वासुदेव त्रिनन्द और श्री राहिणी व्रतकी पुस्तककी पूजा कमश्रयन निमित्त भक्तिपूरक करना चाहिये। पयान चार प्रकारक संघन लिय जाहार, औषधि तथा दस्य आदिका यथायोग्य दान दना चाहिये। इस प्रकार पृथिवी तल पर जो स्त्री

भक्तिपूर्वक इस रोहिणीव्रतको करती है वह क्रमसे कवलज्ञान तथा माक्षकी प्राप्त होती है ।

मुनिराज उक्त मगोदर वचन सुनकर वृत्तिगन्धान उपनामकी यह विधि प्रश्न की । तन्न्तर भक्तिम तिसरे राम कर्पित हो रहें हैं एमी वृत्तिगन्धान हृदयका प्रिय लगनवाली उपनामकी यह श्रष्ट्र विधि प्रश्न कर योगिराजसे कहा ।

ह भगवन् ! मग हा समान दुग्न्धस युक्त किमी अन्य पुष्पन चरि पहल इम उपनाम विधिमा प्रहण किया हा तो इम समय सुयम कहिय । वृत्तिगन्धान वचन सुनकर मुनिराज पुन बोले । तिम समय मुनिराज कह रह थ उम समय वृत्तिगन्धा अपन दोनों हाथ जोडकर मन्त्रमे लगाय हुइ थी । ए पुत्रि ! तम ममान दुर्गाधस युक्त अन्य पुष्पन समस्त दुर्गोंका क्षय करनवाली यह मनाहर उपनाम विधि स्वयं धारण की है ।

मुनिराजक प्रस्तामर वचन सुनकर वृत्तिगन्धान फिर कहा कि ए भगवन् ! यह विधि कहां और किमन की है, मा इम समय सुयम कहिय आप मप्रश्रु वक्ता हैं । यम सुनकर मुनिराज सामन बैठी हुइ, तिम वाक्यार्थ चित्तको लगावगली तथा तिम भक्तिम तन्पर वृत्तिगन्धाम इस प्रकार कइल लग ।

जम्बूद्वीपक भरतखत्रम एक शकट नामका देग है, उमम मिहपुर नामका श्रष्ट्र नगर है । मिहमेन उम नगरक राजा व और कन्त प्रभा उतका गनी थी । उन तर्तोर वृत्तिगन्ध नामका पुत्र था । एक समय तिमलमन्त्र नामक तिनराजका कवलज्ञान उत्पन्न हुआ । उनक ज्ञानरन्वाणमम देवारा जागमन हो गहा था । उमी समय वृत्तिगन्ध मल्लस । छतपर बैठा हुआ था, उमन आकाशमें जात हुए देवीप्यमान जसुरकुमारकी देगा और दग्न्ध ही श्रणमात्रम मूर्छित क्षागधा । चन्दन मिश्रित चलेसे सींचनपर यह क्षणभरम पुन चतनका

प्राप्त हुआ। इस घटनासे पृथिविगन्धकुमारको जातिस्मरण हो गया। वह उसी समय अपन पिता सिंहमेन राजान साथ विमलमदन केरलीर पास गया। वहाँ लोनोंने तीन प्रदक्षिणा दीं, भक्तिपूजक करली जिनन्द्रकी वन्दना की, धर्मश्रवण किया और उनर समक्ष दोनों हा विनीत भावसे बैठ गय।

तत्पन्तर सिंहमेनन अवसर पाकर बड़ी ही भक्ति और आदरक साथ उन विनराजसे अपन मनकी बात पृठी। ह स्वामिन ! मरा पुत्र दुग्न्धमे युक्त किस कारण हुआ है ? किस कारण मूच्छाको प्राप्त हुआ है और किस कारण मूत्राकी छोडकर यहाँ आया है ? यह सब इस समय मुझसे कहिय।

राजान वचन सुनकर विनराज बडे सन्तोषसे कहन लग। ह नन्द्र ! तुम्हारे इस पुत्रन पूरभवम मुनिहत्या की थी जिससे यह नाना योनिकरी जलमे भर हुए ससाररूपी सागरम भ्रमण करता रहा। अब तुम्हारा पुत्र हुआ है और मुनिहत्याक पापस दुग्न्धयुक्त हुआ है। उपर असुरकुमारको जाता दरम हम नरकका स्मरण हा आया जिससे भयभीत हो गया है और भयभीत होनसे ही मूर्च्छित हो गया था। इस घटनास इसे जाति स्मरण हुआ हो।

तत्पन्तर भक्तिम चित्त लगात हुए राजान विनराजस कहा कि- ह भगवत ! इसने किस प्रकार और किस लिय मुनिराजका वध किया था सो मुझसे कहिय। राजान वचन सुनकर करली पुत्र धरसे सम्प्रथ ररनरा मुनि द्विसात्रा कारण कहन लग।

कलिङ्गदशक समीप वि यपर्जन है, उसपर अनेक वृश्चाम व्याप अतिशय सुन्दर बटा भारी अणक बन है। उसम अत्यन्त उंच स्तम्भकी और शतकरी नामक दो हाथा ये जा बूधन स्वामी व तथा मदम सुगाभित व। एक दिन पाना ही हाथी किसी महा- नदीक तम प्रविष्ट हुए और जलक कारण परस्पर युद्ध कर

दाना ही मर गय । मरकर त्रिलोक और षड्हा हुण फिर माँप और नेशला हुण फिर धीलाखरक समान आभा तथा गुमर्चाक समान लाल नर्रांगले वान पञ्जी और नाग विशप हुण, फिर काव्यका मनाहर गन्द करनवाले कवूतर हुण । फिर, कनकपुर नामक रमणीय नगरमें सोमप्रभ राजा थ उसकी सोमश्री नामकी चन्द्रमुखी तथा प्रिय वचन शान्तशाली स्त्री थी । इसी राजाका एक मामभूति नामका ब्राह्मण पुरोहित था, सोमिका नामके प्रसिद्ध उसकी सुन्दरी स्त्री थी । इसी मामिकाक व दाना सोमशामा और सोमदत्त नामक पुत्र हुण । दोनों ही विद्वान कलामे युक्त तथा वेद और स्मृति शास्त्रक विद्वान् थे । सुन्दर शरीरवाली सुशान्ता सोमशामाकी स्त्री थी, और प्रसिद्ध लक्ष्मीमती सोमदत्तकी पत्नी थी । कुछ समय बाद जब मामभूति पुरोहितका देहान्त होगया तब राजाने पुराहितका पद सोमदत्तक लिय दिया । सोमशामा नामका जेठा भाई छोट भाईकी स्त्री लक्ष्मीमतीक साथ प्रीति रखता था । मामशामाकी स्त्री सुशान्ता कुछ मूट प्रकृतिकी थी । वह सोमदत्तके प्रतिदिन बड़ घात बहा करती थी कि मैं सोमदत्त ! तुम्हारी दुराचारिणी लक्ष्मीमती प्रिया सचमुच हमारे पतिक साथ रहती है । सुशान्ताक द्वारा निरन्तर इस बातको सुकर सोमदत्त बहुत दुखी हुआ । वह उन दोनोंक विधर्मीपनका दरकर घरमें घादर निकल गया और मामशामाकी कुण्ठामे महाबैराग्यको पाकर धर्ममन मुनिराजक समीप आनन्दमे स्थित होगया । जब राजाका इस बातका पता चला कि सामदत्त तपश्चरणमें स्थित हो गया है अर्थात् तप करन लगा है तब उसने सोमशामाका पुरोहितक पद पर प्रतिष्ठित कर दिया ।

एक बार सोमप्रभ राजाने शक नामक महादुर्ग राजा वसुपालक पास दूत भजा । दूतने समीप जाकर राजाको प्रणाम किया और फिर योग्य आसन पर बैठकर हर्षित चित हात हुण इस प्रकार निरन्तर किया । निरन्तर करन समय उसने अपने दानों काथ जोहकर

‘योगी च मानी च तरोधनाथ,
शुगन्ध राजा च सहस्रदध ।

ध्याती च मीनी च तथा शतायु -
मदर्शनादेव पुनति पाशम् ॥”

अथा—योगी मानी तरुणी शूरवीर राजा ह्याराफा शान करनवाला ध्याती मीनी और शतायु पुरुष ये दरने मात्रमे पापी जीवको पवित्र कर दत है ।

इमण्ये ह राजन ! शत्रुको जीतनक ण्ये प्रस्थान करने पाल हम सत्रको मार्गमें इन महासुनिता मिलना गहनरूप ।। यह समस्त ममारता पवित्र करत है इन्होंने बाध आदि रद्द शत्रुओंको नष्ट कर ण्या है इसलिये इन मुनि महाराज , जमे हम लार्गाका काय अग्रश्य ही मिठ होगा । इन साधुप दानका फल है कि मगधेश्वर प्रात काल ही त्रिगङ्गमुन्दर नामका हाथी सामन लकर उपस्थित करगा ।

त्रिशद्वय पुरोहितक यह धरन सुनकर राजा उम समय प्रसन्नचित होता हुआ चुन होरहा । अथानन्तर दूमरा णिन दान ही मगधेश्वर त्रिगङ्गमुन्दर नामका हाथा तथा अन्य बहूनी भैर लकर राजाक पास आया । राजा सोमप्रभने भी उनका भक्तिम सन्मान णिया, और फिर हाथी लेकर भैनाक साथ अपन नगरम प्रयाग णिया । उतर राजा अन्य फायरम लीन थ कि इधर मोम क्षमान पूरक सस्कारस प्रतिमायागसे त्रिराजमा उन मुनि महा राजका गात्र ही तलवारस घात कर दिया, और राजाक साथ ही नगरम प्रविष्ट हा गया । तदनन्तर प्रात काल शान पर राजा सोमप्रभका जय हम रातका पता चला कि सोमप्रभने उन सामदत्त नामक मुनिराजका मार डाला है तन बहुत ही कुपित हुए । मुनिहिंसा करनेवाले दुराचारी पापी सोमप्रभको राजान

पञ्चदशम दृष्टित किया अयात् ज्मे उपमानित कर नगरमे
बाहर निकाल लिया । मुनिहिसाव प्रभासमे अत्यन्त दुष्ट बुद्धिवाले
उस सोमशमाका स्त ही दिाम कुष्ठ रोग हा गया । कुष्ठ रोगमे
ज्मेका समस्त उद्ग गल गया, और बडे दु खसे मर कर तनीस
मागरकी आयुवाले सानवे नरकमे उत्पन्न हुआ । बडे कष्ट भोगकर
वहांस निकला और स्वभूरमण समुत्तम एक हत्तार योत्तन लम्बा
तिमिङ्गल जातिका मच्छ हुआ । फिर मरकर छठवे नरकमे बाइस
मागरकी आयुका धारक नारसी हुआ । वहांका समय पूरा कर
बडे कष्टस निकला, और बडे बडे द्वायियोंका भयभीत करनवाला
दुष्ट मिह हुआ । वहांसि भी मरकर पांचवे नरकमे उग्र आकारकी
धारण करनेवाडा और बहुत कष्टका भोगनवाला नारसी हुआ ।
वहांस बडे कष्टसे निकल कर गुमरी फलक समान ब्राल छन्द
आर्यायाग का रगना भयकर काय मर्ष हुआ । फिर मरकर
चाव नरक गया वहांमे निकल कर वात्र हुआ । व्वात्र पर
मरकर तीसर नरक गया । वहांमे बडे मरकामे निकल कर
पत्री हुआ, फिर मर कर दूसर नरक गया । वहांमे क
निकर कर सप्त रङ्गका गगडा हुआ । बगग भी मरकर
दुःखास भर हुए प्रथम नरकमे एक सागरकी धारक
नारसी हुआ । इ शान् ! वहांसि निकल कर
कुमार नामका पुत्र हुआ है इसका शरार
निरन्तर दुर्गन्ध निकलती ग्ती है ।

उम समय प्रतिगन्धुमारन अपन
कर भक्तिम नत मन्तक ।। मुनिराजम
अन्य जाममे सिये हुए इम तीत्र पाठक
हो पगा । मक वचन मुनकर
सचमुचमे दु ग्री है तो रोहिणीम उपक
कर प्रतिगन्धुमारन उनसे कदा दि

किया जाता है। यह सुनकर मामन बैठ हुए पूतिगन्धमे मुनिराजन
 का कि ह वत्स ! जित दिन चन्द्रमा राहिणी नक्षत्रपर हो उम दिन
 यह उपवास किया जाता है। एसा करनेसे तीन वषम चालीस
 उपवास हो जात हैं और पांचवर्ष तमा नौ दिनम सदमठ उप
 धान हाजात है। ये उपवास समस्त पाषाणो नष्ट करवाला हान ह
 इन् प्रकार उपवासी विधि समाप्त होनेपर चौबीस तीर्थकरांनी
 प्रतिमाभांसा श्रेष्ठ पत्र बनवाना चाहिय और उमक न च शाक दूर
 करनर लिय अशोक तथा अष्ट पुत्र और चार पुत्रियासे महित
 रोहिणीका चित्र बनवाना चाहिय। वासुदेव्य चिनेन्द्रकी उत्तम
 प्रतिमा बनवानर उसकी बडे उत्तरमे पूजा करना चाहिय।
 चार प्रकारक मंधरा आश्रयान, औषधिदान तथा बम्ब आदि
 भक्तिपूर्वक योग्य विधिसे दना चाहिये। विधिपूर्वक निय हए इस
 व्रतक साहात्म्यस चाह पुष्प हो चाह न्नी, दब धरणद्र मनुष्य तथा
 विशाधराम जन्म पाता है सदा दूसरोस वृत्तीय और बन्दनीय
 रहता है तथा अन्तम समस्त दुर्गाका क्षयकर निश्चयस माशका
 प्राप्त होता है।

मुनिराजक उपदेशम पूतिगन्धत जैन धरम म्द्र विश्वास रूप
 सम्यग्गान राहिणी नक्षत्रक दिन उपवास, पांच अणुग्रत त न गुणग्रत
 और चार विश्वाव्रत महण निय। इन सम्यग्गान आदिकी माम यम
 पूतिगन्धराहन मुग्धिधराहन हो गया, मा ठीर हो है धर्मस क्या
 नहीं जाता ? इस प्रकार जैनधर्मका पालन कर जय पूतिगन्धराहनकी
 एक माहकी आयु अशुष्टि र ग तत्र उमन अपना राज्य श्री
 विजय नामक पुत्रक लिय द दिया, और स्वय चार प्रकारकी श्रेष्ठ
 आराधनाओंकी आराधनाकी, अन्तम श्रावक धर्मम ही भिर चित्त
 रह कर उमने मरण किया निमस दब दुःखियोंर शब्दसे भर
 हुए प्राणत ताम स्वगाम वीम सागरकी आयुवाला महर्दिक दन
 हुआ। वहाँ उपपाद शय्यापर उन्नत हुआ, उमका बुद्धि

अत्यन्त उत्कृष्ट थी, हार और कुण्डलोस उसका शरीर दृढ़नीप्य
माता हारदा था, तथा जन्मम ही उमे अग्रि ज्ञान था । उसने
अचिन्त्य दिव्य गार दर कर शय्या तडमे मुख उपर उठावा
जौर अपन अलकृत उत्तम शरीर पर फिर इष्टिपान किया । वह
विचारन लगा कि यह क्या है ? मैं कहाँ जागया हूँ ? मरा
कौनसा जन्म है ? मुझे यह उत्तम मुग्ग किम कारणसे प्राप्त हुआ
है ? यह मरी और मुग्ग उठाय हुए कौन लग हैं ? यह अत्यन्त
मुग्ग स्थान कौनसा है ? दवोंक योग्य उपचारस उसने जान
गिया कि यह स्वग है । मणिमय आभूषणाकी किरणामे उस देव
जन्मकी स्मृति हो आइ । वह देव मनाम परिशुत होकर अभिपक्क
गृहम गया वहाँ दवोंने उसका विधि पूर्वक अभिपक्क किया ।
अभिपक्क गत् देव उमे अलकार गृहम ल गय वहाँ उस रत्नमय
पत्थिपर विराजमान कर मणिमय आभूषणोंस अलकृत किया ।
फिर अभिपक्क समान चञ्चल चमर दोल । उमी समय शिगाआम
महमा चय जय शक्य उच्चारण हान लगा । एक आर दवोंक
गगनचुम्बी गदकि साथ देव स्तुतियाका गत् हान लगा । अनन्तर
हैनीयमान रत्नाकी किरणोमे मम शिगनवाल व्यससाय गृहम
विराजमान उस देव पास जाकर दूसग देव प्रणाम कर निम्न
शिगित शचित प्राथना करन लग कि ' देव ! पहल चिनरापका
पूजन करो, फिर सैय सामग्री दगो, फिर नाटकका अदलोसन
करा और उमक वाद दराङ्गनाआकी ललित चम्राआका सम्मान करा ।

पूतिगप्रशासनका जीव अपन सामन खटे हुए तथा आनमे
स्तुति करनगाले दवाका दग्गकर पुन विचारा लगा कि मैंने पूर्व
भयम क्या दान दिया था ? किसका ध्यान किया था ? और कौन
तप तपा या निमम कि पुण्यका मचय कर मैं इस स्वर्गमे उत्पन्न
हुआ हूँ । अग्रचिन्तन रूपी लोचनस अपन ममस्त पूर्वभय दग्गकर
वह मवर्शी सगष्ट चिनदयकी स्तुति करने लगा, और विमानम

बैठ ही हाथ जोड़ गिरसे आगा कर बाला कि मरा उन गुम्ह
 लिये नमस्कार हो तिसरा कि मुये यह धम प्रहण कराया था।
 यही सदा बाल बन्धनीय और पूजा करन योग्य है निम्न कि
 प्रसादसे मैं इस उत्तम द्रव लोभम उत्पन्न हुआ हूँ। इस प्रकार
 पूतिगंधका जीव द्रव वहाँ दियारा माय मनावाञ्छित सुगंध भा
 भागता हुआ रहन लगा। अब मैं पूतिगंधक जीवका जा कि
 इस समय अपरिमित नन्दा धारक द्रव था उत्पत्ति स्थान
 वन्ता हूँ।

इस जम्बूद्वीपक पूर्व दिग्दक्ष क्षेत्रम एक पुष्पलावती देश ।
 उसमे नर यवन चौटी धारह यौवन लम्बी, ममस्त धनस सम्पत्
 तथा पूतिरीमे अन्यत्र प्रसिद्ध पुण्डरीकिणी नामकी नगरी है
 इसमें अपनी कीर्तिस समस्त प्रथियीरो धरु करनवाले प्रिसरीति
 नामक राजा । श्रीमती उनकी रानीरा नाम था। पूतिगंधक
 जीव इन दानार ही रूप सम्पन्न एक रामस्त लोगार मनरा हरा
 करनवाला अकरीति नामका पुत्र हुआ, अकरीतिरा एक मन्त्रे
 नामका मित्र था जो इस प्राणाम भी अधिक प्रिय था। यह एक
 बालक पढ़नर लिय धृतरीति नामक उपाध्यायका संपि गय
 उनका पाम रहनर मोना शास्त्र ही कंग्रिशासम सम्पन्न शास्त्र औ
 शास्त्रमे परिचय करनवाले तथा शास्त्र रूपी समुद्रक परगामी होगय

उत्तर मथुरानगरीमे मणिराम समुद्रका जीनेशाला सागरद्व
 नामका एक बडा धनी मेठ था। उसकी रूपवती कमलनयना जयमत्
 नामकी स्त्री था। इन दोनोंका एक सुमन्त्रि नामका पुत्र था। उ
 समय मन्त्रिण मथुराम लक्ष्मी सम्पन्न लक्ष्मिप्रिय नन्दिमित्र नामक
 मेठ रहना था उसकी धादता नामकी स्त्री थी। उन दोनोंका सुगी
 और सुमति नामकी दो कन्यायें थीं। अतिशय कान्तिरी धार
 व दोनों पुत्रियां मातापितान उपयुक्त मन्त्रि नामक पुत्रक लि
 विधिपूर्वक प्रदान की। उन विवाहक समय अकरीति औ

मयमन यह शत्रो मित्र विचार करत हुए वशिष्ठ मथुरा पहुँच ।
 अर्धरात्रि इन कन्याब्रह्म दग्धकर विस्मित भित हो गया ।
 अर्धरात्रिरी मयमनिस मयमनने इन कन्याब्रह्म हाथम पकड़
 लिया और इन्हे लहर यह ज्योंही जान रागा लोकी नगरवासि
 यान उमर हाथम य शत्रो कन्याके छेन गी । तदनन्तर उन
 मठान नीम हो पुण्डरीकिणी नगर जाकर राजा विमलेश्वरिणिस यह
 यह मय वान कही । उमर शोभाभा कथा सुनकर राजा बहुत
 ही बुधित हुए निमम उहति उन शत्रोका शीम ही असन दग्ध
 निराह लिया । तदनन्तर गौडम जिनस मुन्यमन्य हुए म्याहा
 रह हैं मम मयमा और अर्धरात्रि पाराशरकि ममूठम मुगानिन
 वातपाकपुर पहुँच । यही नातिमम्वज विमलेश्वर नामक राजा
 य निमल चित्तभी धारक विमलेश्वरी उारी गना था । इन शत्रो
 मयमम्वज एव दिनवाचारम युक्त आठ पुत्रिया थी जिन्हें नाम
 इमलेश्वर ई— १ त्रयमति, २ मुक्ता, ३ कनकमाग, ४ मुद्रमा,
 ५ सुमति, ६ सुप्रता, ७ सुप्रानेदा और ८ विमलेश्वरी । य मनी
 कथा विज्ञान मयमन और शत्रो समाव कपरा धारण करनेका । यही
 अतिमय कन्याकी त्रयमतिर परव दिग्दर्शन एव मन्त्रवादी निमिश
 शानीत कथा नि - राघव ' वा चन्द्रकेशरा जन्त्री गह परकमगा
 यही त्रयमताका भवा हागा । तदनन्तर चन्द्रकेशरा उध करीक
 त्रिय गगान ममम्य राजकुमार अपन नगर सुत्राय और जन्गीर
 पानदी इन्जाम मय राजकुमार हपित हात हुए शय भी पन्नु
 उमर रूपम चित्तमा गित यकीर हो रहा है एमा एक भी
 राजकुमार चन्द्रकेशरा य मनी कर मगा । अर्धरात्रि भा
 मयमनर माय यहाँ पहुँचा और चन्द्रकेशरा मयमन बहुत ही
 हपित हुआ । गान्धर्व जातया एव जगा प्रसिद्ध कर्तार परव
 महा माशान चन्द्रकेशरा नेमा हररुप यव वा दे यह म यहाँ
 कथा है—

ने नीय रूपम कौतुक करता हुआ अर्धरात्रि कुमार भा यहाँ

शक्तिव भारक लागोती तब करनेवाला था । नीलासुता नामकी उमकी शुभ स्त्री थी । शिवरात्रिकाकी आठ मुद्रियां थीं जो जन्म रूपवती थीं, मानियाँ समाप्त समझाए जाय दंत ध और धैर्यम युक्त थीं । मन्ना, काका, विपुला, वगवती, कनकमाला, शिरीषमा, जयमति और सुकाता ये आठ नाम थे । उन मदक शरीर छलते सुंदर थे । रात्रा जनसमुदायक साथ उगागमें गया था । जय दहामि लीन कर नगरमें जानना उचन हुआ तब अत्रागिरि नामका एक बलवान् उँचा हाथी दिग्ग उगा गमने अपने बाधनक स्तम्भका धूर कर गला और गला तथा मार डाला । जनानिद दसा रि लारी मनुष्योंका विचन कर गला तब दह सुगुण जीव मणियाँम जड़ हुए अपने विमानम उतर कर शेष आया तथा कन्याओंका पाउ कर हाथीक आग मडा हो गया ।

रात्रा अपने परिवारक साथ अरुणाक्षिका नामक मरी शक्तिमें दमने लगा । उमने पुत्र दत्त कर हाथी-नाशक अपने पैरकी ठाकर लगाइ और हाथीम गण्डमधलपर घाट कर उस घशम कर लिया । साथ ही अन्य बलीक करणाम गमना गमन कर, उमपर सवार हो गया, और आत्मम गमम प्रविष्ट हुआ । अरुणाक्षिका हाथीपर चढा रना रात्रा निमित्त क्षान्ति जादशम ठमे अपनी उक्त आठों कन्याओं प्रदान कर दीं । तदनंतर गनक साथ कुछ दिन तक भाग भागकर अरुणाक्षिका कीतपोर मनुष्योंम सुशामि गय अनिशय सुन्दर बलिगाह गमरमें पहुँचा, वहाँ मवसन नामक मित्रका अपने साथ लकर उमने बड़ी प्रमत्तनाक साथ पुण्डरीकिणी नगरम प्रवेश किया । गमरक घाट द्वारपर पहुँचने ही डा गानान विद्यालयक बलम कुछ उठ उठ और गम वनाय, तथा उमका बग भरकर उनक साथ गड हा गये । नगरम भीतर कहीं किसी वस्तुका कण करना कर्त्तव्य मिला सुगन्धक वग्ना, कहीं तांबूल तथा यक्ष आत्मिका बचना, कहीं पाँसाम गत क्रीडा करण, तथा कहीं रत्न विक्रय करना जादि शिविब-कीतुक करत रहे । गणिकारा

वय रत्न कर उदोंने पिताक आग लगाओ आश्रयर्म डालनजाला नगीका उचृष्ट नृत्य किया । इम प्रकार ज्ञान-सम्पन्न अर्ककीर्ति अपने विज्ञानको प्रकट करना हुआ तगरम मनमोही मनुष्योंक समक्ष उर कौतुकको बढानेकाले अनेक काय करता रहा । अन्तमे उसने त्रिक्रियासे चतुरङ्ग मैना बनाकर नगरकी समस्त गायोंको हर लिया और युद्धक लिय राजाका अह्वान किया । गायाना हरण जानकर राजा बहान ही क्रोधयुक्त हुए और उसक भाष युद्ध करनक लिय शीघ्र ही नगरसे बाहर निकल । तदन्तर घोडा घोडक साथ, हाथी हाथीक साथ, पैदल पैदलक साथ और रथ रथवालेक साथ युद्ध करन लग । कहीं एक हाथान दूसर हाथीको मार दिया, कहीं किसी घोडेन दूसर घोडेको मार दिया, कहीं पैदल सिपाहीने दूसर पैदल सिपाहीका नष्ट कर दिया और कहीं रथपालन दूसर रथको घूर्ण कर डाल । इम प्रकार मनुष्याका क्षय करनजाला बहुत भारी मग्नम होनेपर हरपाक मनुष्य भाग गय, बारगीर गडे रह और मुर तथा असुर आनन्दसे युद्धको दायन रहे । तदन्तर अर्ककीर्तिन धनुष खींचकर पिताक समाप अपने नामम अङ्कित बाण छोडा ।

अर्ककीर्तिन द्वारा छोडाहुआ बाण मन्द मन्द गतिसे जाता हुआ पिताकी गोदम पडा । अपनी गोदम अपने पुत्रक नामाक्षरोंसे अङ्कित बाण दग्धर गना शीघ्र ही प्रमत्त हुआ । सन्तोषसे उसका हृदय भर गया । फिर क्या था, युद्ध रन्द कर पिता पुत्र दोनों ही घाटनमे उतर कर एक दूसरके सम्मुख पहुच । दोनोंने ही समस्त शरीरमे व्याप्त होनेवाक सन्तोषन परस्पर गले लगकर एक दूसरका आलिंगन किया । दोनोंक ही हृदय आनन्दसे भर रहे थे और दोनों ही हृष्यन मधुर शब्दाका उच्चारण कर रहे थे । पुत्रक आनेक हृष्यन राजाने कुछ समाचार पूछकर तथा कुछ बानालाप कर याचकाक लिय मन चाहा दान दिया । और शीघ्र ही अपने त्रिकयी अर्ककीर्ति पुत्रक लिये समस्त राजाजाके समक्ष अपनी सम्पूर्ण लक्ष्मी परिमद छोडकर

परिणामोस श्रीधर मुनिव समीप तप महण कर लिया । और कठिन तपश्ररण द्वारा समस्त कर्मोंको नष्ट कर नि ण प्राप्त कर लिया ।

अर्कशीर्ति नामक चक्रवर्तीकी उत्कृष्ट लक्ष्मी पारर अपन विशाल राज्यका संभालन उस प्रकार करन लगा निम प्रकार नि स्वगम इन्द्र अपन विशाल राज्यका करता है । एक दिन राजा अर्कशीर्ति मङ्गल शिवर पर बैठ हुए व नि इतनमें उनकी इष्टि डिमालयकी शिवराजी समान आभाशाले एक चित्र चिचित्र कृतस प्रिरान्तित भेषपर पडी । व गडियां मिट्टीसे उस मघना आकार पृथ्वी पर लिपननर लिय उगत हुए नि इतनम वह मघ विलीन हागया । उर्गन राज्य चलानर योग्य, महागुणवान् यगोमती रानीसे उत्तरत बड पुत्र विमलशीर्तिको बुलाया और सामन्ता तथा मन्त्रियोर ममनर उस यगस्त्री पुत्रक लिय राज्यपद प्रदान किया ।

अन्तम मन्त्रिराग्यसे वर हुए राजा अर्कशीर्तिन ममस्व लोगामे पूठरर बड हपक साथ शीलगुन नामक मुनिरानक समक्ष जिन दीक्षा धारण करली । उठोन एमा उपर तप किया जा नि साधारण मनुष्योंको हुएर था । अन्तम जन आयु एक माकी अग्नित रही तत्र मल्लेपना धारण की । और चार प्रफारकी आराधना आगध कर निमल अभिप्रायसे मरण किया । तन्न्तर जहाँ दग्दयियों द्वारा आनर किया जा रहा है ऐमे जाना घादिनास मनोर अच्युत स्वगमे यह नाइस सागरकी आधुनाला दग् हुआ । पहल निमका वर्णन किया जा चुका है, ऐसी प्रतिग वान भी अपन आपको श्रावकर घर्तोंसे भूवित किया था और रोहिणी नक्षत्र नि उग्रास रररर समाधिमरण किया था । घर्तक प्रभायसे बड प्रतिग था भी पद्म पत्य तर सुख भोगनेवाली उस अच्युत स्वगक दग्गी महादधी हुई । उसक साथ मनराडिछन भोग भोगर आयु अन्तर्म तुम इस भूत पर उत्पन्न हुए हो ।

इमी जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्रक शुरुनाङ्गल दशम एक

हर्मिनागपुर नामका नगर है, उसका राजा क्षीरसाक है और उनकी रानी विभुत्प्रभा । विभुत्प्रभा शिवजीके समूहके समान प्रभावशाली है । 'ह राजन' पुत्र जन्मकी इच्छा करनेवाले उन क्षीरसाक तुम अगोचर नामके कुरुपुत्र हुए हो । वृत्तिगंधा, जो अत्युत्तम स्वर्गमें तुम्हारी प्रियदधी थी, वह आयुका क्षय होनेपर स्वर्गमें च्युत होकर प्रविर्षीपर अवतीर्ण हुई है । वह अहमदाबादी चम्पापुरी नगरीमें बसकर राजा मधुसूदनी श्रीमती नामके राजासे रोहिणी नामके पुत्री हुई है । 'ह राजन' वह रोहिणी तुम्हारे समीप ही स्थित है, प्रसन्नचित्त है, तुम्हारी महादधी है और प्राणोत्तम भा अधिका प्रिय है ।

चारण ऋद्धिधारी रूपकुम्भ मुनिराजके कन्ये दचन मुनिके अगोचर राजाने उनसे पुनः प्राप्ति की कि न नाय ! अधिक उद्वेगमें क्या ? सुप्रसन्न अनुमति करके मर पुत्र और पुत्रियोंके भयान्तर भी कहिये । अगोचर दचन मुनिके रूपकुम्भ मुनि अ धिमानरूपी नरसे दसकर पुत्र और पुत्रियोंके भयान्तर कहने लगें—

इस जन्मपूर्वक भवतत्प्रेतमें उत्तमोत्तम वर्णसे भरा हुआ एक शरसन नामका वृक्ष है । उसकी उत्तर मथुरा नामकी नगरीका शासन उस समय राजा श्रीधर करते थे । उनका महादधीका नाम त्रिमला था । उन गौरीके कमला नामका उत्तम पुत्री थी । इसी राजाके पतिद्रुष्टुर्भ्रम उद्वेग हुआ एक अग्निशमा नामका अग्रभाषी ब्राह्मण था । उसकी तिलका नामकी स्त्री थी । तिनके चित्त प्रसन्न मिल रहे हैं तब उन ब्राह्मण ब्राह्मणीसे सात पुत्र हुए । उनके नाम इस प्रकार हैं—१ अग्निभृति, २ श्रीभृति, ३ वायुभृति, ४ विशाखभृति ५ त्रिशूभृति, ६ महाभृति और सुभृति । दरभूमिमें तत्परे नाना शास्त्रोंमें निपुण और पवित्रतासे पीडित थे स्वयं पुरुष पटना पहुँचे । उस समय वहाँ सुप्रसिद्ध राजा थे, दरभूया उनकी रानी थी और राजाके सिद्धके समान गम्भीर दण्ड करनेवाला महा क्षमिशाली

नामका पुत्र था । उसी पत्नी नगरम एक विशोभ नामका दुसा
भूपति था । उसकी रूपश्री नामकी भाया थी और दोनों कमला
नामकी पुत्री थी । माता पिता अपने सुन्दरी पुत्री कमला निर-
रथक लिये प्रणत थे । उनका विवाह दरकर व हरिद ब्राह्मण
विचार करन लग कि पापम मुक्त रहनवाये हम लोगान पूर्वमे
समस्त दु राका नाशक दयामय जैतम धारण नहीं किया । धर्म
युक्त पुरुषानो विभूतिया प्राप्त होनी हैं और महा पाप करन
वालाको महा दुख उपन्न होन है । इसप्रकार धर्म और अशुभ
प्रत्यक्ष फल देखकर उन बहुभूति आदि ब्राह्मणाने यथाधर मुनि
राजक पाप जाकर आश्रम धर्मका स्वरूप पूछा । उन प्रियवच
मुनकर योगेश मुनिरानन उन साता पुरुषाने लिये उत्तम धर्म
स्वरूप कहा । साथ ही यह बालाया कि जा मनुष्य मनुष्यदय
पाकर भा धम नहीं करता है वह माना निधि दरकर अग्नि
रहित होजाता है । धमस ही प्राणियाका कुल सम्पत्ति प्राप्त हो
ते, धमस ही दिव्य रूप मिलता है, धर्मस ही धनकी प्राप्ति हो
ते, और धर्मस ही कीर्ति फैला है । धर्म, प्रियीपर बनीकर
मात्र समान है, धम उच्छृष्ट चिन्तामणि है, धम शुभ धन-
धारा है और धम मनोग्याको पूण करनवाली कामधनु है । अधि-
कतस क्या ? नेत्र और इन्द्रियाका प्रिय लगनवा जौ नो मार-
पदाथ दिग्दाइ दत्त हैं ह ब्राह्मणा ! यह सब धमका फल है ।

‘यह सब धमका फल है तथा अधमस मनुष्यको दुख हो
है’ ऐसा मानकर उन सभी ब्राह्मणोंन यथाधर मुनिराजक सम-
नीक्षा धारण कर ली । तदान्तर तपश्चरण कर उन सबन आ-
जन्तमे समाधि मरण किया चिमस व सब सीधर्म स्वर-
महाद्विकदैन हुए व दा सागर तक सुग्य भागकर वहांम च्युत
और अब वीतशोक आदि राहिणीक पुत्र हुए ह । यह जा लो-
पाल नामका आपका अग्युदयशाली पुत्र है वह भी पूर्वजन्मम :

झरू था। निर्मल बुद्धि र धारक उस भुव्वन पिहितान्नर मुनि-
नर समीप बड आदरस मम्पद्गेन आदि श्रावकष धत प्रहण
ह्य व। यह गगन गामिनी विनामे समस्त कर्मभूमियमि स्थित
हृदिम सभी तिन चैत्यालयारी भक्तिमे पुडकिन क्षरीर होना
आ तीना काल बन्दना करना था। तिन भक्तिमे तत्पर रहनवाला
ह छुट्टन आयुष अन्तर्म समाधि मरण कर देव दुन्दुभिर्यारु
दिस युक्त भौधम स्वगरी प्राप्त हुआ। पक्षीस पन्थ तर दिव्य
मुख भागनर याद् वहामि च्युन होकर राष्ट्रिणीक लोकपाल नामका
र हुआ है। ह राजन् ! यह मेन तुम्हार पुत्रोंका भयान्तर
म्बधी वणन किया, अथ तुम्हारी पुत्रियोंका भयान्तर कहता हूँ—

इम मनाहर जम्बूद्वीपर पूर विदहक्षेत्रम धन धान्य और
रनुयामे भरा हुआ पन्थ नामका दश है। उमम ना तिनयाध
वन है उनकी दक्षिण श्रेणिम अलकापुरी है, उसष राजाका नाम
गरुडमेन था। निमर कान्तिकी धारक कमला राजाकी प्रिय रानी
थी। उन दानाक गार पुत्रियाँ थी जो रूपमम्बध थीं, कमलक
तमान सुवशाली थीं और तिनर गरीर सुवणक ममान आभाशले
थ। उनर नाम क्रमश इम प्रकार हैं—कमलश्री, कमलगन्धिनी,
कमला और त्रिमलगन्धिनी। य गारा रूपवती पुत्रियाँ एकवार
प्रसन्न चित्तमे वृक्ष फल और फूलाम सुगाभित उगानमे गर वर
सुव्रताचाय नामक चारण ऋद्धिधारा श्रेष्ठ मुनिराजम उद्दान बड
हीतुकष साथ उपयामका माहात्म्य पूडा-ह नाथ ! लक्षम जो
यह उग्रास नामसे कहा जाना है तथा उमे गरीोत्तर धम धनगया
चता है वह क्या वस्तु है ? सुव्रताचाय उन कथाआर वचन
मुनकर उनक लिये यथाक्रममे उपयामका लक्षण कहन लग—

ह पुत्रिया ! सिद्धा तशास्त्रक पारगामी तिनगत अगन वान
षाय और स्वागर मेदस आढारको चार प्रकारका वस्तु हैं।
प्रह चारों प्रकारका आहार बल और कान्तिका प्रदान करवाग

है। चित प्रणीत मुनिमागस पत्रिउ मुनि इन चगुर्षिउ आहारका जा त्याग करत हैं वह उपवास कहलाता है। इमर मित्राय सय प्रकारका आहार ग्रहण करत हुए भी लोकम जा उपवास माना जाता है वह कभी उपवास नहीं हो सकता। न जान उन शास्त्रोक्त ज्ञाना इम अनथपुण वातका उपवास क्या न्त है? उनर यहाँ लिखा है कि फल, पूर, दूध, पानी, हर्षिद्रैव्य, ब्राह्मणका सद्ग, गुरुक वचन और औषधि य आठ प्राणियाउ धमकाय हैं। इउ आठर सेवनसे व्रत नष्ट नहीं होता। परन्तु यह निश्चित है कि इन आठका सेवन करत हुए उपवास नो हाता और न धमर इन्द्रुन प्राणियाँको उनमें उपवासका फल ही प्राप्त होता है। इ धमर तत्पर रहनवाली पुत्रियो! पत्रिउ मुनिमागस अनुमार मर प्रकारक जाहारका त्याग करनमें ही उपवास हाता है। इ पुत्रियो! अब मैं उपवासका माहात्म्य कहता हू उस शुद्ध चित्तम मुना—

यद जीव अज्ञानम जो भयकर पाप करता है वह मर उपवासस इस प्रकार जल जात है तिस प्रकार कि अग्निमें प्रथन ॥ तिस प्रकार धूलिस लिप्त शरीरवाउ मनु य जलस निमल हाजाता है उमी प्रकार कमरूप धूलिस लिप्त आत्मा उपवास रूपी जलम निर्मल हाजाती है। तिम प्रकार अग्निमें तपाया हुआ गंडा मय ओरम मैलका छोड दता है उकी प्रकार व्रतउपास रूपी जलम आत्मा सय ओरम कमरूपी मैलका छोड दता है। तिम प्रकार नमीन जलका आगमन रुक जानपर सूय तालावका शुष्क कर दता है उती प्रकार इन्द्रियाँका वगम रखनवाला मनुष्य समस्त पापाँका शुष्क कर दता है। यह वात समस्त शास्त्राँम मुनी जानी है कि उपवासम बढ़कर और दूसरा तप नहीं है। पापोर क्षयका कारण हातस उपवास परम तप है। इउ गार्धर यथ पिशाच नागद्र और राक्षस-सभी लोग व्रतउपासके प्रभावस तत्काल वशम हो जाते हैं। त्रिया मन्त्र औषधि याग तथा अन्य सभी प्रकारक लोग

उपवाससे बर्शीभू हो जाने हैं। यह मत्सेपमे हमन आपलार्गाई उवावमकी कुछ विधि और माहात्म्य बतलाया है।

मुनिरात्र उक्त वचन सुनकर कन्याओंका हृदय सन्तापम भर गय। तदनन्तर उन कन्याओंन उनी मुनिरात्रस पचमात्र उपवासकी विधि पूछी, कन्याओंका वचन सुनकर योगिरात्र पुन कहने लग-
निनत्र भगवानन कृष्ण और शुक्रव भदमे पचमी ए प्रकारकी कनी है। कृष्ण पक्षम जो पचमी आती है वह कृष्ण पचमी कह लाती है। भद्र्यनीर हरिन चित्त द्वांर इस पचमीक दिन, पांच वष पांच माहक उपवास करत हैं। एम कृष्ण पचमात्र मत्त्वसे निनशासनकी भावना रखनवाद्य जीव निश्चित रूपसे समाधिको प्राप्त हाता है। इम पचमीक प्रभावमे भद्र्यनीर संसारम दो तीन भय भ्रमण कर निवाध रूपसे सिद्धिनी प्राप्त हो जाता है। निन भक्तिमे तत्पर तथा निगुद्ध हृदयका धारक जो पुत्र्य एम जन्ममे ममाग्निपूर्वक मरण करता है वह ब्राध, मान रूपी मन्त्रिर्वास भग हुए तथा माया और लीभरूपी तरङ्गाम युक्त इम रुमाररूपी ममुम सात्र आठ भरसे अधिक भ्रमण नी करता। जैसा नि आगममे कहा गया है—

परुन्दि भद्रगाहणे समाहिमरणेण कुणइ जा बाल ।

ण हु सो हिंडइ उहुमो सतक मत्र पमात्तण ॥

अथात् जो एम भद्रम समाग्निमरणम पथाय ओडना है दह फिर सात आठ भरकी छाडकर अधिक भयाम परिभ्रमण नहीं करता।

यह प्रथम कृष्ण पञ्चमी श्रीपञ्चमी कहलाती है उसका उपवासकी विधि पूर्वोक्त प्रकार है। अब दूसरी शुक्र पञ्चमी है उस निन भी भद्र्य समूह उपवास ग्रहण करत हैं। इस प्रतकी विधि भी पूर्वप्रतकी तरह पांच वष और पांच माहम पूण होती

है। व्रत पूण होने पर चारा पुत्र, धूप, अक्षत आदिके द्वारा चिन भगवानकी प्रशिष्ट पूजा करनी चाहिये। घण्टा चढ़वा फन्नुप आदिसे चिनमन्दिरको अलङ्कृत करना चाहिये। पञ्चमी प्रतका माहात्म्य प्रकट करनवाली पांच पुस्तकें लिखाकर वितरण करना चाहिये। मुनियोके लिये भक्तिपूर्वक धार तथा औषध आदि दान देना चाहिये। आर्यिसाआके लिये दस्य प्रदान करना चाहिये। इस प्रकार विधिपूर्वक पञ्चमी व्रत करनेसे प्रभाशसे भद्र्य जीव गभादि पञ्चकल्याणक प्राप्त कर, अथान् तीथकर होकर अग्निनाशी निर्माण पदको प्राप्त करता है।

मुनिरानक वचा मुनकर उन पुत्रियाने दर्ने बन्नाक तथा चिन मतमे आमक्त हार पञ्चमी व्रतकी विधि ग्रहण क। इस प्रकार पञ्चमी व्रतको ग्रहण कर चिनका चित्त सतापस नर र्णा है ममी व कन्याके मुनिराजक चरणकमलोंको नमस्कार कर अपन घर गयीं। व चारों कन्याके घर जाकर अपन महलकी छत पर बैठी हुई थी कि इतनम वनक मस्तर पर शत्रु ह। चकती हुई चिनली गिरी जिमसे व चारा नर गइ र धमकी नाम र्सत उनी चि सौधम स्वगम दत्रियां हुई। दग्ना, एक चिन उर। ससे ही व चित्ररियाक गीतसे सुसोभित स्वगम दयादका प्राप्त होगयी। वहां पांच पत्य तक दवोंक साथ सुग्न भागकर उत्त चारा ही दत्रियां मरणका प्राप्त हुयी जीव स्वगस च्युत हाकर ह राजन् ! इस समय रोहिणीक गर्भसे उपन्न हुई वसुधरा चान्ति तुम्हारी पुत्रियां हुई हैं। व सभी हर्षसे सहित हैं।

इनप्रकार स्वयकुम्भ मुनिरानक पास अपन तथा अपन पुत्र पुत्रियोक भवान्तर मुनकर राना अशोक और रोहिणी, बहुत ही सन्तोषको प्राप्त हुए। अन्य दूसरे नर नारी भी उन समय उक्त भवान्तर मुनकर काइ सम्यक्त्वको प्राप्त हुए, चिमीने श्रावकक व्रत ग्रहण क्रिय और काइ उत्तम मुनिव्रतको प्राप्त हुए।

इसी बीचमें प्रसन्नचित्त तथा आश्रयस्त निसका चित्त व्याप्त हुआ है एमी दमुमनी कन्या मुनिराजको प्रणाम कर इसप्रकारक वचन बागी-ह नाथ ! ह माधो ! मौनव्रत और उमका उद्यापन मिमप्रसार किया जाता है मर लिय इस समय यह और भी कहिये । धमकी वृद्धि करनेगाल उसर वचन मुनर रूप-वृत्त मुनिराज उससे कडन लग । निस समय वे कह रहे थ उम ममय दमुमनि आदरसे हाथ जोडकर अपने ललाटेसे लगाय हुइ थी ।

नानक समय जत्र तक परा मोचन न होनाय तत्र तक कुल नही वालना चाहिय । हुकार सरत आदि दोषोंस रहित उत्तम मौनव्रत करना चाहिये । ह तन्त्रि ! इस प्रकार इच्छाओर निराश पूरक वारह थप तक मौनव्रत करनेस यह व्रत पूर्ण होता है । व्रत पूर्ण होनपर उमका उद्यापन किया जाता है । अब मैं संक्षेपसे उनर उद्यापनकी विधि कहता हू । पुष्प धूप आदि सामग्रीमे श्री बधमान रामीकी महामूर्तिमे साथ पूजा करना चाहिय । भक्तिमे तत्पर होकर कर्मोंका अय करनेर लिय समस्त सधना वस्त्रादि प्रदान करना चाहिय । और जैन मन्दिरमे उच्चस्वर करन गाला उत्तम घंटा अनर चन्दाओर साथ दना चाहिये । मौनव्रतक करनेस यह जीव भरनेरे घाट मरगम मनोहर शब्द करनगाला तरा नाना भोगोंसे सहित दय हाता है । तदनन्तर स्वगर मुग्य भोगकर प्रग्नी पर उचरत होता है और धन्यवर्ती आन्धिक माग भागता है । इस प्रकार चिरकाल तक प्रथिरी सम्बन्धी मनोवाञ्छित भाग भोग कर जैनदररी लाला वारण करता है और कर्मरचने रहित होकर सिद्धि पदको प्राप्त हाता है, निसक यशसे समस्त दिशाण वशान होरही हैं और जो मन्द गतिसे गमन करती है ऐसी ह पुत्र ! अब मैं तर स्थिे मौन व्रतका प्रत्यक्ष फल कहता हूँ तू मुन-

मौन व्रतक प्रभासे अनुप्योक्त वचन कानाको मुख पहुँचाने-
वाल, मनको हरण करनवाले, लोच विश्वासक कारण, प्रमाणमूर्ते

तथा मयके ग्रन्थ कान्त योग्य होने हैं। दशांगीयत्वं समान
 मन्त्री आक्षारण मन्त्र लोग अपन महत्त्व पर धारण करत हैं-यह
 मौन व्रतका ही उत्तम फल है। इन लोकमें निम्न चिरकाल
 तक मौनव्रत धारण किया है यह जो कुछ भी करता है वह
 मन्त्र भय राष तथा विपत्तों नष्ट करनेवाला होता है। मौनव्रत
 प्रभावसे मनुष्याका मुख-कमल गंधुर अश्रुगोत सहित, मनाहर
 और नाना प्रकारके अथसे सुगन्धित भाषण करनेवाला होता है।
 चिरकाल तक मौनव्रत करनेसे समस्त वैश्विक फल देनेवाला
 कठिनसे कठिन विद्याय भी सिद्ध हो जाती हैं। ना काय प्रथिवी
 पर जन्माय जयशा अन्यन्त सहायका कारण होता है यह कार्य भी
 मौनव्रत करनेवालेके वचनसे सिद्ध हो जाता है।

मुनिराज कर्मोंका ध्यय करनेके लिये जो ध्यान करत है वह
 भी मौनसे ही करत है इसलिये मौन समस्त अर्थोंका सिद्ध
 करनेवाला है। मौन व्रतको धारण करनेवाला काइ पुरुष अणुव्रत
 गुणव्रत और शिक्षाव्रतमें सहित होता हुआ सिद्ध भगवान्का भक्त
 हो। क्रमसे मात्स्यकी भी प्राप्त करता है।

इस प्रकार मुनिराज वचन सुनकर और उठे मा वचन
 कायमें नमस्कार कर कन्या प्रमुमतीन उनके समीप मौनव्रत ग्रहण
 किया। रूप कुम्भ मुनिराज पास पूर्वभय तथा धर्मका स्वरूप
 सुनकर अगाध आग्नि उठे भक्ति पूरक नमस्कार किया और फिर
 दक्षिणागपुरकी ओर गमन किया। अगोर, राहिणी तथा उनका
 पुत्र पुत्रियाँ सभी अपन भयनम प्रवेश कर विपुल भोगोंको भागन
 हुए प्रसन्न चित्तसे रहन लग।

एक बार वर्षद्विदिन दिन राता अशोक स्नान कर महादशमी
 रोहिणीके माय रूप पूर्ण सिद्धामन पर बैठ धे। समीपमें बैठी
 हुए रोहिणीन अपन पति अशोककानक पात काशक पूलरी

आमाराला एक सफेद बाल दम्पती । दरग ही नदी उम अपन हाथस निकाल कर अशोकक कमल तुल्य हाथ पर रख दिया । प्याही रातान महाद्वीप द्वारा अर्पित सफेद रात दम्पती लाली व भाग और शरकी निम्ना कर्मत हुए वैराग्यका चिन्तन कर लग । इसी बीचम वनपावन आकर राजास कहा—ह महाराज ! उग्रानम श्री वासुदेव जिनान पधारें हैं । वनपावन दचन सुनकर रातान शीघ्र ही सिंहासनम उठकर और उस निगाम सात पत्र जाकर श्री वासुदेव स्वामीका पत्रो न नमस्कार किया । वनपावनक पुरस्कार दरग मन्मानित किया, और आनन्द भराव गन्म नगरवासी लोगोंका इसको खबर ली । लक्ष्मी कुमारक लिय राय लक्ष्मी सौधी और स्वयं महाप्रभूतिस रूपन हाकर आ रक साथ वनक प्रति चल । वहां उग्रान श्री वासुदेव स्वामीकी भक्ति पृथक् तीन प्रविणाम कर नमस्कार किया और फिर उहीक समाप निज दाक्षा धारण कर ली । अपरिमित प्रभास धारण करनरा अगाव यागिरान इन्द्रा द्वारा नमस्कृत श्री वासुदेव स्वामीक गणपर हा गय । तदनन्तर बहुत समय तक कठिन तप तपकर अन्तम कर्मोका क्षय कर उत्तम निराण नगरको प्राप्त हुए ।

महाद्वीप रोहिणीन भी ममस्त परिग्रह छोडकर और श्री वासुदेव भगवानको नमस्कार कर सुमति नामक गणिनीक पास तप धारण कर लिया । रोहिणीन मामान्य स्त्रियाको दुःखर नाना प्रकारका तप कर आयुष अन्तम कर्मोकी हानि करनक लिय सत्सुनाकी विधि धारण का, निमसे म्हा पयायका छुकर वह समाधिमरणक प्रभासमे अन्त्युत स्वगम दिव्य लक्ष्मीका धारण करनराला दय हुइ । दरगो, एक ही उपनामस रोहिणीने मामान्य जनाना दुःप्राप्य सुखकी परम्परा प्राप्त की । धमका माहात्म्य आचिन्त्य है ।



अशोकरोहिणी व्रतके उद्यापनकी विधि ।

जिस किमीको अपने व्रतका उद्यापन करना हो वह 11दिपूर्वक शक्ति आसार सुन्दर सामग्री एकत्रित करे और साधर्माजनोंको द्रव्य ले जानेके लिये अपने घर पर आमत्रित करे । साधर्माजन भी गाजेबाजेके साथ उद्यापन करानेवालेके घर जावे आर बहा भजन आदि गावे । विधि करानेवाला आचार्य घरकी किसी पवित्र जगहमें चात्रोंका स्वस्तिक बनाकर उम पर एक घट रखे । घट रखनेके पहले उसमें स्या रवया या फरु पुष्पादि डाकर सूत्र नारियल और पचागा सूतमें उभे त्रैष्टित कर ले । उस पर आम या अशाकके हगित पत्र तथा तूरा और पुष्पमाला बगैरह मागलिक पदार्थ भी लगा देवे । घटके पास ही एक घृतका चौमुखी दीपक जलावे और फिर मण्डापन या मगल पचक पढता आ उसी घट पर पष्प डाले ।

यह सत्र क्रिया हो चुकने पर साधर्माजन द्रव्य लेकर गाजेबाजेके साथ मन्दिरमें जाव, उन्हींके साथ इन्ही हुई ग्नियों अथवा उद्यापन करानेवाले महाशय उस घटको मन्दिरमें ले जावे । मन्दिरमें वेदिकाके सामने अथवा किसी त्रिस्तृत स्थानमें चौमा राधकर तरन पर मुग्गा अथवा शुद्ध रगमें रगे हुए चावलोंका माडना बनावे ।

सबसे पहले एक छोटा बरग्य खींचकर ॐ लिखे फिर अष्टदल कमल बनावे उसके बाद पाच दल का एक कमल बनावे । कमलके दलोंको विभिन्न रंगोंसे सुन्दरताके साथ भरकर अलंकृत करे । घरसे लाया हुआ कलश इनी माडनेके एक कोण पर चावलोंका स्वस्तिक बनाकर रख देना चाहिये । मण्डलके बीचमें ऊँची चौड़ी या ठीना रखकर उस पर मिहासन सहित श्री वासुपूज्यस्वामीकी प्रतिमा विराजमान करे । यदि मन्दिरमें श्री वासुपूज्यस्वामीका प्रतिमा विद्यमान न हो तो अथ तार्धस्वामीकी प्रतिमा भा विराजमान करा जा सकती है । पूजाकी समस्त सामग्री शुद्धतापूर्वक तैयार कर माडनेके सामने दूमे तरत पर जमा लेना चाहिये ।

विधिसे प्रारंभमें अपनी अपनी रुचिसे अनन्तर पचामृत या साधारण जम्से श्री वासुपूज्यस्वामीकी प्रतिमाका अभिषेक करना चाहिये, फिर नित्य पूजाका स्वयं कर अष्टदल कमल पूजा करे । अष्टदल कमलका पूजा अष्टकर्म सहित सिद्ध भगवानुकी पूजाके रूपमें की जाती है । उसके बाद श्री वासुपूज्यस्वामीके गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान आर निर्वाण कल्याणकी पृथक् पृथक् पूजाएँ जैसी कि उद्यापनमें लिखा है, करना चाहिये । पूर्णाघ अथवा जयमालमें नारियलका गोला चढ़ाना चाहिये । प्रत्येक कल्याणकी पूजाके बाद ॐ ह्रीं गभकल्याणकमण्डिमय श्रीवासुपूज्यजिनाय नम इत्यादि मन्त्रोंकी एक

अशोकरोहिणी व्रतके उद्यापनकी विधि ।

जिस क्रिमीने अपने व्रतका उद्यापन करना हो वह अधिकपूर्वक शक्ति अनसार सुन्दर सामग्री आमंत्रित करे और साधमीजनोंको द्रव्य ले जानेके लिये अपने घर पर आमंत्रित करे । साधमीजन भी राजेशाजेके साथ उद्यापन करानेवालेके घर जावे आर यहा भजन आदि गावे । विधि करानेवाला आचार्य घरकी क्रिमी पत्रित जगहमें चात्रश्रीका स्वस्तिक बनाकर उम या एक घट रखवे । घट रखनेके पहलु उममें सवा रवया या फल पुष्पादि ठाकर सूत्र नारियल और पचरागा सूतसे उभे वेष्टित कर ले । उम पर आम या अशोकके हरित पत्र तथा तूर्वा और पुष्पमाला बगैरह मांगलिक पदार्थ भी लगा देवे । घटके पास ही एक घृतका चौमुसी दीपक जलावे और फिर मण्डलाष्टक या मंगल पत्रक पढता आ उमका घट पर पण्य डाले ।

यह सब क्रिया हो चकने पर साधमीजन द्रव्य लेकर राजेशाजेके साथ मन्दिरमें जावे, उन्हींके साथ इष्टी हुई क्रियाँ अथवा उद्यापन करानेवाले महाशय उस घटको मन्दिजाजीमें ले जावे । मन्दिरमें वेदिकाके सामने जयवा किसी विस्तृत स्थानमें चौका पाथर तटन पर मुगा अथवा शुद्ध रंगमें रंगे हुए चावलका माडना बनावे ।

जलवारा देना चाहिये । फिर शान्ति प्रितर्जन प्रदक्षिणा स्तुति आदि क्रियाएँ करना चाहिये । उद्यापनके द्वैभ आहार और धि-ज्ञान और अमय इन चार दारोंमें शाक्त अनुसार द्रय निकालना चाहिये ।

इसके बाद यदि आगे व्रत करनेकी शक्ति न हो तो हाथमें एक नारियल ले प्रतिमाजीके समक्ष ग्यटा होकर नौवार णभोकार मन्त्र पढ़े और त्रिनात भावसे कहे कि—“ हे भगवन ! शक्ति अनुसार यह महान व्रत मेने समय तक धारण कर उद्यापन क्रिया, अत्र शक्तिसे अभावसे आगे धारण करनेमें असमर्थ हूँ अतः व्रत भाण्डारमें रखिये । इतना कहकर वेदी पर नारियल चढाता हुआ नमस्कार करे । रोहिणी व्रतकी कथा पढ़कर सप्तरो मुनिये और उसीका माहात्म्य सप्तको बतलाये जिससे अन्य लोगोंकी रुचि भी इस व्रतके धारण करनेकी ओर बढे । व्रत कथाकी पुस्तके सावर्भा भइयोमें प्रितरण करे ।

—पन्नालाल जैन 'वमत', साहित्याचार्य-मागा ।



जैन व्रतकथासंग्रह



स्व० प० दीपधन्द्रजी वर्णी कृत इमं संग्रहमे तन्त्रय,
दण्डक, वेडकवाण, धुतरकथ, त्रिगोकत्रोज, मुकुटमत्तमी,
पल (अष्टय) दशभा, यं ण द्वाती, रोटिणी, अकात पचमी,
ककिना पचमी, चदन पछी, नि०प सातमी, वि शल्य अष्टमी,
सुगधगीमी, जिनरात्रि, जिनगुण सागति, मेघसाग, लखि
विान, मौन एकादशी, गरुड पचमी, द्वादशी, अनत, अपानिहा
गकिग, पु०राजनि, वागगी चौतीस, औषधिदात्र, परधन लोम
उ कचचद्रायण व्रत इमं संग्रह ३२ व्रतरी वचाण दी गद है ।
तथा १५५ प्रव ग्के मतोकी मूचा भी दे दी गद है । पू० १५६
मूल्य १।०० अत्रय मग ह्ये ।

मैनहर, दिगम्बर जैन पुस्तकालय-सूरत ।

बृहत् कथाकोष



इस कथाकोषमें राजकुमार, सोमशर्मा, विष्णुदत्त वित्चोर, यगोरथ, जयविजय रपती, चलना, श्रेणिक, सोमशर्मा व वारिण, विष्णुकुमार, वैकुमार, विनयधर, बुद्धिमती, प्रियरीरा, सोमशर्मा, वीरभद्र, अभिनन्दन मुनि, वानविनय, ज्ञानाचरण, गुरुनिन्दन, व्यजनहीन पाठ, अर्धहीन पाठ, उभयशुद्धि, नागदत्त, शामिक, व्यासदेव, अत्रियेकी हंस, हरियेण, विष्णु प्रधुग, चौहक, चौपर, सरमों ध्यान, दुताख्यन, जूभा, मनुष्य पर्याय, चन्द्रवेध, बलुग, समुद्रदत्त वसुमित्र, जिनदत्त, लहुच, पद्यथ, ब्रह्मदत्त, जिनदास, रुद्रदत्त और श्रेणिक इस प्रकार ५५ जन कथाओंका संग्रह है जो सस्कृतमें प राजकुमार शास्त्री गान्ध्याचार्य कृत सुकम हिन्दी भाषामें है । पृ० २३१ पक्की जिल्हा मू० २॥१

मन ११, दिगम्बर जैन पुस्तकालय-सुरत ।



श्रीरोहिणीव्रतोद्यापनम् ।

(रचयित — प० पद्मनाभ गज साहित्याचार्य)

शृपमादिसुत्रोक्तान् निनानानम्य भक्तितः ।
तद्यापामह चक्षु रोहिणीव्रतकस्य हि ॥ १ ॥
आदौ श्रेयोऽष्टक पाठ्य पुष्पक्षेपणमप्युतम् ।
कार्य श्रीशसुपूज्यस्य जिनस्याभिपवस्तत ॥ २ ॥
पाञ्चकेन्याणिकी पुजा विधया पुनरस्य च ।
शान्ति विनर्जन कार्यं स्तुतिधापि परित्प्रम ॥ ३ ॥
चतुर्विध महादान देय रक्तिपुरस्मरम् ।
नमः श्रीशसुपूज्याय जिनाय परमात्मने ॥ ४ ॥
इति मन्त्रमय कार्यं स्थिरीकृतेन चेतसा ।
नानोपहरणाद्यैश्च त्रिधातका प्रभावना ॥ ५ ॥

श्रेयोऽष्टकम् ।

श्रीमन्नम्रपुरासुरे द्रमकुटपद्योतानप्रणा,

मास्तत्पादनरे दनं प्रवचनाम्भोर्धोद्वय्यायिनं ।

ये सर्वे जिनमिद्धमूर्यनुगतास्ते पाठका माधव ,

स्तुत्या योगिर्नथ पञ्चगुणव कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥ १ ॥

नामेषादिजिनाः प्रश्नस्तवदना ख्याताश्चतुर्विंशति,

श्रीमन्तो मातेश्वरप्रभृतयो य चक्रिणा द्वादश ।

ये त्रिष्णुप्रतित्रिष्णुलाङ्गलधरा मसोत्तरा विश्वति-

स्रैष्ठोत्तराभिपदास्त्रिषष्टिपुरुषा कूर्ते तु ते मङ्गलम् ॥ २ ॥

ये पञ्चोपधमद्वय श्रुतनपो वृद्धि गता पञ्च ये,

ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकृशला चाष्टौ त्रिषाथारिण ।

पञ्चज्ञानधराथ यऽपि विपुला ये बुद्धिऋद्धोत्तरा ,

सप्तैते सकलाश्च ते मुनिवरा कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥ ३ ॥

द्योतिर्वन्तर मावनामगृह मरौ कृत्वाद्ग्री स्थिता -

जम्पृशास्मलित्यश्वासिपु तथा वधामरूप्राद्रिषु ।

इक्ष्वाकागिरी च कृण्डलरगे द्वीप च न दीश्वरे,

शृङ्गे ये मनुजात्तरे जिनगृहा कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥ ४ ॥

कैलामो वृषमस्य निर्भृतिमही वीरस्य पारापुरी,

चम्पा वा वसुपूज्यमज्जिनपते सम्मदशैलोऽर्चिताम् ।

शेषाणामपि चान्यन्तिशिखरो नमीश्वरस्यास्तौ,

निवाणावलप. प्रसिद्ध उभवा. कूर्ते तु ते मङ्गलम् ॥ ५ ॥

वापत त्रिनक्षत्रविषयमृदु मोषीन्द्ररुणादयो,
 वर्णादेव दिग्द्वानाद्भविष्यत्स्य चक्षुश्च दना ।
 तद्वीना नाकादियानिषु नासा दुःख महेते ध्रुव,
 मरुत्समात्सुम्नारामणोपकरद कुर्वतु त महेत्सु ॥ १ ॥
 श्रोत्राणां मरुत्सुम्नारामणोपकरद कुर्वतु त महेत्सु ॥ १ ॥
 मरुत्सुम्नारामणोपकरद कुर्वतु त महेत्सु ॥ १ ॥
 देवा यानि वरु प्रमथमनम किम्मा चतु महेत्सु ॥ १ ॥
 वर्णादेव तमोऽपि उपैति नगा कुर्वतु त महेत्सु ॥ १ ॥
 आकाश मृत्तमावादचहृददना दग्निरुवा ॥ १ ॥
 नै मङ्गादापुगाय प्रगुणशमया महेत्सु ॥ १ ॥
 मोम मोम्पत्स्यामाद्रिविति च विदुम्नारामणोपकरद कुर्वतु त महेत्सु ॥ १ ॥
 विश्वात्मा विश्वच कुर्वितु मरुत्सु ॥ १ ॥
 इत्य धीमिनमद्गलाष्टकमिदं श्रीमहापात्रम् ॥ १ ॥
 कल्याणयु महात्मयेषु सुधियेषु ॥ १ ॥
 ये मृगवति पठन्ति तेषु सुखेन ॥ १ ॥
 लक्ष्मीरात्रियते व्यपाप हि ॥ १ ॥
 (१५८ व = विद्या ॥ १५९ ॥ १ ॥ १ ॥ १ ॥ १ ॥

निःसीमसौख्यसमृद्धमण्डित योगसण्डित रतिररा.,

कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते श्रीवीरनाथजिनेश्वरा ॥ १ ॥

सद्गुह्यान् तीक्ष्ण कृपाणधारा निहतकर्मकदम्बका -

दयेन्द्रवृन्द नरन्द्रवद्या प्राप्तसुखनिकृत्स्नका ।

योगीन्द्रवागनिरूपणीया प्राप्तनाथकलापका ,

कुर्वन्तु मङ्गलमत्र त सिद्धा मदा सुगुदायकाः ॥ २ ॥

आचारपञ्चक चरण चरण चुञ्चलः समताधरा ,

नाना तपोमाहति हापित कर्मका सुखताकरा ।

गुप्तिरथो परिशीलनादि विभूषिता वदतावरा ,

कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते श्रीसुखोर्जित शमरा. ॥ ३ ॥

द्रव्यार्थभेदविभिन्नश्रुतभरपूर्णञ्च निमालिनो,

दुर्षोण योग विरोध दक्षा सकृन्त परगुण जालिन ।

कर्तव्यदृष्टनतत्परा विज्ञानगौरवशालिन ,

कुर्वन्तु मङ्गलमत्र त गुरुदेवदोधिति मालिन ॥ ४ ॥

सषमममित्थावशका परिहाणि गुप्ति विभूषिता.,

पञ्चाक्षदान्ति समृद्धता समतासुधा परिभूषिता. ।

भृष्टप्रविष्टरायिनो विविधद्विष्टवृन्द विभूषिता ,

कुर्वन्तु मङ्गलमत्र त मुनय मदा शमभूषिता ॥ ५ ॥

(मङ्गल उक्त एव तु ५ वा श्री वासुदेव जित दक्षा अभिरेक करे । अभिरेके बाद ॐ तय जय नमः तु नने ॥ ५ ॥ नमः तु आदि पन्कर निय पुत्राके अनुसर रथाप करना चाहिये । रथापक बाद अष्टदल कमल पुत्रा करण चाहिये । बीचमें ॐ लिखकर गठों दिशाओंमें आठ पाँखुरे बनाना चाहिये ।)

अष्टदलकमलपूजा ।

अनुष्टुप् छन्द ।

अर्हदादिपदासामोकार विदुसयुतम् ।

कामद मोक्षद व दे कर्मरातिलपदम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं मण्डलमध्यगताय पञ्चशामेष्ठिराय ॐ ह्यगार्यं निर्वे-
कनीति स्वाहा ।

ज्ञानाशरणमनाश लब्धान्तसुखोव न् ।

वन्दे मिद्ध स्वय सिद्ध कर्मशुविशेषम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं नानाबाणकमान्दितय सिद्धाय ॐ ह्रीं निर्वेकनीति स्वाहा ।

दगावरणमघातमञ्चिज्ञान उदयम् ।

वन्दे मिद्ध नगरका त मन्वत्रुविर्हायम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनाशणकर्मदिताय मिद्धाय ॐ ह्रीं निर्वेकनीति स्वाहा ।

वधवाधाममारुघ्या व्यागवत्सरागुम् ।

व दे मिद्ध स्मराविद्ध क्षीरकर्मिन्द्रम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं वधकर्मिन्द्राय सिद्धाय ॐ ह्रीं निर्वेकनीति स्वाहा ।

मोहभूपालभूपानन्दवन्दुसुन्दरम् ।

व दे मुक्त गुणैर्युक्त गान्धर्वदिवामणिम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं मोहनीयकर्मदिताय सिद्धाय ॐ ह्रीं निर्वेकनीति स्वाहा ।

अवगाहगुणोपनासु कर्षिनायनात् ।

वन्दे शुद्ध महावृद्ध कर्मकन्दर्पनात् ॥

ॐ ह्रीं आयु कर्मदिताय सिद्धाय ॐ ह्रीं निर्वेकनीति स्वाहा ।

नामकर्मापहारेण वृक्षमप्रगुणशालिनम् ।

वन्दे मुक्तिमहीकांते लोकत्रयनिमालिनम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं नामकर्मादिताय सिद्धयामष्टिं सर्वं निवेपामीति स्वाहा ।

गोत्रगोत्रविदारणप्राप्तागुरुलघुत्वाकम् ।

वन्दे सिद्धिवधूत्या तमहा माइनकारकम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मादिताय सिद्धयामष्टिं सर्वं निवेपामीति स्वाहा ।

अन्तरायनिनाशेन प्राप्तानन्तमहाबलम् ।

वन्दे लोकशिखारूढलोकातीतसुनिश्चलम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अन्तापकर्मादिताय सिद्धयामष्टिं सर्वं निवेपामीति स्वाहा ।

(इष्टके वा १ चे लिली हुइ पुनःप करना चाहिये ।)

श्रीवासुपृज्यजिनगर्भकल्याणकपूजा

शार्ङ्गलविमालिनः ३ ।

हे कर्मारिक्लृपाणमोहतिमिरप्रध्वमत्तजपत,

हे सज्ज्ञानविभाविभासितजगद् हे मोक्षलक्ष्मीपते ।

हे श्रीम्तु जगतीपते जिनपते नमः वासुपृज्यो महा,

नागत्यात्रमहोत्सवे नततमानस्मान्मनाथा कुरु ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपृज्यजिने नमः । अत्रावतारावतरसम्बोपट् ।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपृज्यजिने नमः । अत्र तिष्ठतिष्ठठठ ।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपृज्यजिने नमः । अत्र मम सन्निहितो मय भव वषट् ।

वसन्ततिलवाट ६ ।

गर्भागम त्रिदिरनाथ समुद्रय घ,
 दन्ध नर त्रिनिधयैर्मगतीति तमू ।
 भागीशो त्रिसुता त्रिशिवा समुत्पे,
 नीरैर्यजे जिनपति छलु वासुपूज्यम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय उ मज्जामृत्यु-
 विनाशनाथ जल निर्वप मीति स्वाहा ।

देवे द्रष्टुदपरिवन्दितपादपद्य,
 कर्माटवी शित कुठारमयत्नसिद्धम् ।
 सद्य दनैरलिकदम्बरकमोददक्षै ,
 सपूजयामि जिनप किल वासुपूज्यम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय सक्षाराताक-
 विनाशनाथ चन्दनम् निर्वप मीति स्वाहा ।

येनाभिता किल मही ललिता पभूव,
 यक्षे द्रमोषितसुररत्नचयै मम तात् ।
 त वासुपूज्यजिनप जिनपप्रघात-
 मर्चामि तण्डुलचयैरमृताशुतुल्यै ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय कक्षपरदमासये
 अष्टतम् निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वर्गावतारसमये जानी यदीया,
 ताकाधिनापनिचयैर्महिता बभूव

रत्नोद्ययैरलिकदम्बकचुम्बैस्त,

पुष्पैर्यजामि जिगप वसुपूज्यपुत्रम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकरवाणकमण्डिताय श्रीशशुपूज्यजिनद्राय कामवाण-
विनाशनाय पुष्पम् निर्वशामीति स्वाहा ।

आनन्दमन्दिरमनिन्द्यममन्दवद्य,

दैत्यारिवृ दपरिवन्दितपादपत्रम् ।

श्रीशशुपूज्यजिनप दिनपप्रताप,

नेत्रेद्यरैर्ननु यजे रमनाप्रियैश्च ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकरवाणकमण्डिताय श्रीशशुपूज्यजिनद्राय सुवारोक-
विनाशनाय नेत्रेद्यम् निर्वशामीति स्वाहा ।

सज्ज्ञानदीपकनिरम्बनमेऽरकाश,

विश्वस्तमोहमहिमात्रममेयमानम् ।

सपूजयामि रुचिरेर्मणिदीपपुत्रे ,

पूज्य सुरैर्जिनपति वसुपूज्यजातम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकरवाणकमण्डिताय श्रीशशुपूज्यजिनन्द्राय मोहा-
विनाशनाय दीपम् निर्वशामीति स्वाहा ।

सद्दुष्याननीक्ष्य करवाल निकृत्तकर्म-

शुशु समस्तजनमितमत्रयहीनम् ।

श्रीशशुपूज्यजिननाथमह यजामि,

धूपे सुगन्धितदिशैर्मुदितालिवृ-दे ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकरवाणकमण्डिताय श्रीशशुपूज्यजिन द्राय अष्टर्ष-
विनाशनाय धूपम् निर्वशामीति स्वाहा ।

स्वामप्रदेशरिशोमितलोकशीर्षं,

जामायतीतमतिद्रु सुचय विषोधम् ।

वातादपुगसर्ज्वत्तवद्गर्भं—

स्वामि ऋतुवर्त्मनिनवास्तुपूज्यम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं गर्भस्त्वणकमण्डिताय श्रीवास्तुपूज्यमिन्द्राय मोक्षदत्त
स्तम् निवसामीति स्वाहा ।

सश्रीरचन्दनमदघनपुष्पपुञ्जं,

नेपेयदीपवामृषकलात्मनेन ।

अधण वदितरुद दिविने द्रष्टुं देव,

श्रीवास्तुपूज्यमिनप किल पूजयामि ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं । ईश्वर्याणकमण्डिताय श्रीवास्तुपूज्यमिन द्राय अनर्थाश्व
स्तम् निवसामीति स्वाहा ।

आर्षा-उ-व ।

आषाढकृष्णपक्षे पष्ठोदिवसे जयावतीदेव्या ।

गर्भं कृत प्रयश दिवित्रैर्विहितोत्पन्न मत्तया ॥ ११ ॥

जयमाला ।

शार्दूलविशालदिग्दण्डम् ।

रद्वृग्वक्ष्य मङ्गोत्सव्य सुरचरैराकाशमश्रावितै

नानावर्णधरै विचि । मणिभि सष्ट दि । भू लवू ।

शुभद्राधरेस्तदीपसुगुणै रजे यथा लाञ्छिता,

त वन्दे वसुपूज्याजतनय सत्रय मदा मौलपदम् ॥ १३ ॥

चतुष्टयी (१५ मात्रा) ।

चम्पापुर सञ्जिवननगरं सर्वदिशाशोमितनर निकटे ।

न्यवसद्मृपूज्यशुभभूष स्त्रिसुवनचन्द्रित सुन्दरदृष ॥ १४ ॥

लयावती माण्डा किरु तस्यास्त्रिनतागीकृतध्वाननमस्या ।

आप टक्ष्य श्यामलपक्षे पद्मोदिवसे सुन्दरपक्षे ॥ १५ ॥

यामि-या किरु पृष्ठे मागे ज्योतिश्चक्रविद्याभित्तरागे ।

मञ्जुलपङ्कस्थाकाशे रम्यकौमुदीनिचयमहासे ॥ १६ ॥

पश्यो-स्म शम्भे सुरनाम मञ्जुतरगण्डद्वयभागम् ।

शुभम धवल शुभमृगाज सुन्दरनखदनावलिभाजम् ॥ १७ ॥

कमलाकलशसनपन रम्य मालाशुगल पदपदगम्यम् ।

दीशार्थि रजनीपतिरिष्व सुन्दरमोन्युगं इतविष्यम् ॥ १८ ॥

कनककलशयुगल कामारं कमलभ्रानितमफलाकारम् ।

कछोलाकूलित नदनाथ सिंहपीठमुचितत्वसनायम् ॥ १९ ॥

अमाविमानं ह्यतिमणीय फणिवनमवन ह्यतिकमनीयम् ।
 स्वगशिपनल विलमन्त स्वमममृदमिम गिदमन्तम् ॥ २० ॥
 सद्दश निद्रारित्प्रा वृद्धमप्रोतिशयाधि निद्रप्रा ।
 प्रयूषे पतिनिश्च यथा पत्या वृत्तमत्कार प्राप्ता ॥ २१ ॥
 पृथक्ती विनयन पुता य स्वप्रमधपरिणाम महो तम् ।
 सुदवावधिरोधन नृस्य परिश्रम स्वप्रावलि फलितम् ॥ २२ ॥
 कथ प्रिय तत्र गर्भे प्राप्तस्तीर्षकर गुमलक्षणमाप्त ।
 तस्य विमरमत कथपनि गुणगौरवमस्यै वदति ॥ २३ ॥
 तरकाल सुलोकारप्राप्ता इन्द्रनिदेशयय मप्राप्ता ।
 श्रीमुण्या निर्वाजनरनिता सेवा कौशुलमाग्निलभिताः ॥ २४ ॥
 भिनजननीं सेवितुमायाता भूषास्य मवन मप्राप्ता ।
 असेवत विविध नृपनागं दुगुणगणनिनिशातनमारीम् ॥ २५ ॥
 चतुर्णिजापामपतिनिचया पवनाकर्मित सुदर निचया ।
 गर्भोत्पन्न विधातु प्राप्ताश्चमापतिमवन सपाता ॥ २६ ॥
 वस्त्राभरणं विविधप्रकारं वरुणपृथुर्भृत्तमामारे ।
 जिनजननीं निनजनक मक्त्या ममारिषु शुभप्रातिप्रसक्त्या ॥
 गीत नृत्य नव रमकलिन चक्रे सुरीषय परिचलितम् ।
 यद्यपती रत्नानि ववर्ष मर्त्यमनस्तनाति जहर्ष ॥ २८ ॥
 कोऽप्यधनो न भुव तदानीं कोऽपि महादृग्णो न तदानीम् ।
 ससभुव नहि कोऽपि विपुक्त ससभुवनहि कोऽप्युन्यत् ॥ २९ ॥

सर्वे धर्मयुता विलसन्ति स्येऽजनेन युता विहसन्ति ।
 कृत्वा गर्भमहोत्सवममरा प्रजन्ति स्म स्वर्गं सुखनिकराः ॥३०॥
 साक्षाद्भेद रसायनमेतं गर्भस्मिन्मानन्दममेवम् ।
 ये पश्यन्ति जना वरम्भक्त्या त्रिस्मृतनयननिमेषप्रभक्त्या ॥३१॥
 धन्यतरा भुवि ते किल सन्ति परजन्म यपि तथा मयति ।
 पञ्चमकालमवा ययमत्र सीदामो गुणराशि पत्रिण ॥ ३२ ॥
 छिन्नपक्षयुगपक्षिगणा इव मग्नरादयुगला, पुरुषा इव ।
 गमनागमनसुशक्तिविहीना महाजनोचितमाग्यविहीना ॥ ३३ ॥
 किन्तु चेतसा ध्यानं तस्य कुर्मः सम्प्रति गर्भमहस्य ।
 इह मन्तोऽपि भय, महितेन मयतु दुःखानि किल तेन ॥३४॥

द्विधा गाय छन्द (२४ मात्रा)

वासुपूज्य त्रिनरात्र महागुणवाग्निनामिन्,
 ध्यानकृपाणनिकृत्तकर्मभर हे गुणहामिन् ।
 गर्भमासजं दुःखत्रयं मम दूरीभूयात्,
 तत्प्रमादतो मुक्तिरमा यं निकटीभूयात् ॥३५॥
 ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यग्निने द्राय महार्थं
 निर्वेशमीति स्वाहा ।

श्रीवासुपूज्यजिन जन्मकल्याणकपूजा

शादूलविक्रादितच्छन्द ।

दृष्ट्वा येन भवस्य दुःखसरणिं राज्यादिकं प्रोज्झितं,
 बाल्येनैव पराजितो हस्तिदो यन क्षिर्तो तेजसा ।
 य द्यायन्ति मनीषिण प्रतिदिन मोक्षस्य सप्राप्तये,
 त पूज्य वसुपूज्य राज्यतनय भक्त्या मजे सततशुभम् ॥
 ॐ ह्रीं ज म कल्याणकमण्डित श्री वासुपूज्यजिनद्र । ॐ ॥

उरावतर रावौपट् ।

ॐ ह्रीं ज म कल्याणकमण्डित श्री वासुपूज्यजिनद्र । ॐ ॥
 तिष्ठ त ट ।

ॐ ह्रीं ज म कल्याणकमण्डित श्री वासुपूज्यजिनद्र । ॐ ॥
 सनिहितो भव भव वपट् ।

दुतविलम्बितच्छन्द ।

इतविधिं सुविधिं सुनिधिं यजे जिनपतिं सुर्णं सुन्दरम् ।
 कनककुम्भ भूतन सुधारिणा सुसन्तुतं वसुपूज्यजिनद्र ॥ ३ ॥ ॥

ॐ ह्रीं ज म कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनद्र ॥ ३ ॥
 न्यासु युविनाशनाय जल निर्वप मीतिं सप्तम् ।

विद्वत् जन्मजन्ममृति पीडित सुखयोःकृत पीडनमापितम् ।

अग्निममत यजेऽथतगाग्निना सुगनुत वसुपूज्यसुत सदा ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं न मरुत्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय अष्टम-
विनाशनाय अक्षय निर्वागमीति स्वाहा ।

स्वप्रिययेन पगाजितम मथ प्रकटितोत्तममोक्षयथ शुभम् ।

वरलतान्तचयेन यजे जिन सुगनुत वसुपूज्यसुत सदा ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं न मरुत्याणकमण्डितय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय काम-
बाणविनाशनाय पुष्टाम् निवागमीति स्वाहा ।

त्रिबुध्वन्दितशदमरोरुह सुमतिपातितपापमहीरुहम् ।

वारतमन यजे चरुणा जिन सुगनुत वसुपूज्यसुत सदा ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं न मरुत्याणकमण्डितय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय सुव रोम-
विनाशनाय नयद्यम् निर्वागमीति स्वाहा ।

तनुविमाविनिमामितदिक्चय इततमाग्निं लोकमय मुदा ।

रुचिर्गैर्हि यजे यदापुर्न सुगनुत वसुपूज्यसुत सदा ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं न मरुत्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय माहा-
विनाशनाय दीपम् निर्वागमीति स्वाहा ।

हुततमा भुवि यन तपाऽनले निस्त्रिकर्मचया विमयाऽऽजले ।

तमिह ध्रुवचयन यजे मुदा सुगनुत वसुपूज्यसुत सदा ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं न मरुत्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय अष्टम-
विनाशनाय ध्रुवम् निर्वागमीति स्वाहा ।

अस्त्रिकर्मसप्तचयाइता ननु तपो महमा भुवि यन ते ।

फलचयेन यजे विविधेन त सुगनुत वसुपूज्यसुत सदा ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकर्मणिष्ठनाय श्रीवासुपुत्र्यजिने द्वाय मेक्षक-
पक्षय फलम् निर्वणमीति स्वाहा ।

विमलदर्शनघोषविमासित मकलधृतसुरिसममन्वितम् ।

परिप्लेऽर्घ्यचयेन जिनोत्तम सुरनुत वसुपुत्र्यसुत मदा ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं न कल्याणकर्मणिष्ठनाय श्रीवासुपुत्र्यजिने द्वय अनर्घ-
पक्षय अर्घ्यम् निर्वणमीति स्वाहा ।

शाश्विनाच्छ्रव ।

मासे रभ्ये फाल्गुनाख्ये मनाञ्जे पक्षे कृष्णे भद्रसङ्घामिरामे ।

दर्शात्पूर्व वामरे जन्मलब्धा यनाभातो मध्यमालोरुक्षेप ॥ ११ ॥

नीत्रा शीर्षे दक्षैर्लभ्य देवैर्शे सिक्तोऽभृत्क्षीरवाराशितोर्यः ।

अर्घ्ये धृत्वा हस्तयोरद्यनाये भक्त्याह त वाऽपुत्र्य जिनेद्रव ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकर्ममासाय श्रीवासु-
पुत्र्यजिने द्वाय पूर्णार्घ्यं निर्वणमीति स्वाहा ।

जयमाला ।

प्रोत्तुङ्गे गिरिराजस्यशिवरे क्षीरोदधेगाहृत,

श्वश्र्च द्रुकलाकलापतुलितैर्म्मामिरानदिता ।

जात य मुदिता सुभा गतिवरा मसिक्तयत्त स्वय,

त वन्दे वसुपुत्र्यराजतनय सनय सदा सौर्यदम् ॥ १३ ॥

चतुष्टयी (१६ मात्रा)

*फाल्गुनकृष्णचतुर्दशवार स्वात्मरशीकृतमङ्गलभारे ।

चम्याया वसुपुत्र्यनृपस्य जयावतीदधीमद्वितस्य ॥ १४ ॥

गृहेऽभवजिनजन्म प्रशस्त पापतापहरण कृत्तव्यम् ।
 सिद्धपीठकम्पनतो ज्ञात निर्जल्पतिना जिनपतिनामम् ॥ १५ ॥
 ज्योतिषगृहऽभवद्धरिनादो मरनामर मरन दरवाद ।
 व्य-तरनिलय पटदप्रणाद सुरालये धर द्रष्टानाद* ॥ १६ ॥
 क्षण इवभजाता अपि जाता सुखयुक्ता दृरीकृतवाता ।
 त्रिजगन्मध्ये क्षोभोभूत सकलदृष्टलोक परिपूत ॥ १७ ॥
 मतिभ्रुतावधि बोधसुयुक्तो चित्तोऽभवद्दु त्यावलि मुक्त* ।
 चतुर्विधामरनाथ समृद्धा दृरीकृतसकलप्रत्यक्षा ॥ १८ ॥
 निज निज शुभपरिवारापदा* समागता वरपक्ति समता, ।
 समागतः प्रथम सुरराज स्वाधिष्ठानीकृत गजराज ॥ १९ ॥
 पुलोमज्ञान्तर्गेह गत्वा चित्त मातनिकटस्थ नत्तम् ।
 कृत्रिमनिद्रावर्ती विधाय जिनजन्नीं जिनपतिमदाय ॥ २० ॥
 नदिरामत्य पाणि युगमध्ये ददौ निलिम्बत शुभमध्ये ।
 सोऽपि सु-दर जिनपति ददौ विविधचिह्नवररक्षणगेहम् ॥ २१ ॥
 दृष्ट्वा विस्मितमना बभूव दशशतनत्रपुत्र प्रबभूव ।
 निजोत्सङ्गमध्ये स भूत्वा तमो जयधरनिना रत्न भू रा ॥ २२ ॥
 अधिष्ठाय धवल गन्राज विविधनात्रभदनागलिभाजम् ।
 सचचाल सुरमन्मसमृद्धो गगन सरचित्ताखिल व्यूहः ॥ २३ ॥
 शनै, शनै समवाप सुतुङ्ग मरुनामधःणीषाशृद्धम् ।
 पाण्डुकवन तत्र विनिवेश्य सुरसेना सकला विनिवेश्य ॥ २४ ॥
 पाण्डुक शिलासिद्धपीठे त जिनशाल गुणभारलसन्तम् ।
 देवभ्रेणिपुग प्रविधाय जिनसत्रन चित्त सभाय ॥ २५ ॥^{११}

पञ्चममागरस्यशुभसलिल दूरीकृतजनताखिलकलिलम् ।
 कनकघटैरानाद्य प्रमदत्या देवष्टदमहयोगसुमक्त्या ॥ २६ ॥
 भूमिपिपेच सुरराट् जिनवाल दूरीनामितसुरतसिभालम् ।
 स्वच्छनलकलशेभ्य पतितव्योमनिच्छजुलकलकलमहितम् ॥ २७ ॥
 सुरीसमृद्धिके नृत्य किन्नरपतिकृतगीतसुकृत्यम् ।
 शची चकारामरणियोग जिनपतिदह सुमगामोगम् ॥ २८ ॥
 पुनरागत्य सुरा समेजुर्विविधमहोत्सवमर विरेजु ।
 चम्पापुरे ताण्ड्य कृत्वा पुन पुन सुरपस्त नत्वा ॥ २९ ॥
 विश्व ज ममहोत्सवमार निखिलासुरनरमोदनकारम् ।
 वासुपूज्य इति नाम त्रिषाय गुणावलि चेतसि सधाय ॥ ३० ॥
 देश जग्मुगात्ममवाम कुर्वतोऽथो य मृदुहासम् ।
 नराधिपो वसुपूज्यसुनामा महीतलेप्रसृतास्त्रिषामा ॥ ३१ ॥
 मचकार वामङ्गलमार पौरजनामोदनसचारम् ।
 दृष्ट्वा महोत्सव त मा लोका प्रापु पुण्याचारम् ॥ ३२ ॥
 वय परोक्ष ध्यान कृत्वा दुःखप्रददुरित किञ्च इत्था ।
 नीर घाचो गितनोमि पुन पुन स्तवन गितनोमि ॥ ३३ ॥
 वासुपूज्य जिन्नरात्र नमामि तमोनाश दिनरात्र नमामि ।
 कर्मद्विष मृगराज नमामि मोदसि ध्रु द्विजगान नमामि ॥ ३४ ॥

मयूरागतिञ्छ द (सधेया तइसा) ।

हे वसुपूज्य नरे द्रुतनून ! तमस्ततिवात दिवाकर देव,
 मुक्तिरमामुख नील पयोज निशाकर सौर्य सुधा भरशालिन् ।

दयान कृपाण निरुत कुकर्म कलाप निरन्त पराक्रम मासिन्,
मक्षमहो भवमागश्च तार वर स्वयत्प्रनमत्र हि त्रेहि ॥ ३५ ॥

ॐ ह्रीं ज म मङ्गलपासाय श्री वासुपूज्यजिन द्राय म.ार्थ निर्व-
पामीति स्वाहा ।

वासुपूज्य जिन तपःकल्याणक पूजा ।

कामस्त्रीमुख चारुपत्र निचय प्र दीप्त दावानल,

बुद्धि श्री तत्कीर्तिकान्तिविलमत्प्रसरत्नालयम् ।

लोकानन्दपु सागरोन्मिक्तिकर राका निशायकम्,

व-देऽह वसुपूज्य राजतनय मोक्षार्थलोद्धारकम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री तप कल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिन-द्र ! अत्रावता
वतर मन्वोपट ।

ॐ ह्रीं श्री तप कल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिन-द्र अत्र तिष्ठ
तिष्ठ ठ ठ ।

ॐ ह्रीं श्री तप कल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिन-द्र अत्र मम सन्नि-
हितो भव भव वपट ।

सुमङ्गप्रयातच्छन्द ।

इतो येन मोहो गतो लोकबाह्य,

सुविधावध्या धृता येन चित्ते ।

जलैर्मर्मपात्रस्थितैः स्वच्छरूपैः,

मुदाह जिन त यजे वासुपूज्यम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं तत्र कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय ज्ञाननामृत्यु
विनाशनाय जल निर्वहामीति स्वाहा ।

विशमेण येन क्षत कामभूषो,

इता षोष तन्द्रा प्रमुदात्मकेन ।

द्विरफ प्रियेण महाचन्दन,

मुदाह जिन यजे वासुपूज्यम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं तत्र कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय कल्याण
विनाशनाय चन्दनम् निर्वहामीति स्वाहा ।

गुणोद्येन युक्त महा दोषमुक्त,

इत्यत महश्च जित मारुतेभ्यः ।

मितेनाक्षतन प्रथमज्जुलेन,

मुदाह जिन त भजे वासुपूज्यम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं तत्र कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय कल्याण
प्रथमम् निर्वहामीति स्वाहा ।

अकाम विराम विगम विभाग,

महान्त मयात मदा श्रयान्म् ।

लता तत्रनेन द्विरेफप्रियण,

मुदाह जिन त भजे वासुपूज्यम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं तत्र कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय कल्याण
विनाशनाय पुष्पम् निर्वहामीति स्वाहा ।

मुदाह्योपदेशोऽर्पितो जीवशात्र

दुःखनिपाहयानि ।

निषेध निरेद्युन पेद्यान्तमाप्त,

मुदाह जिन त यजे वासुपूज्यम् । ६ ॥

ॐ ह्रीं तव कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिने द्राव क्षुद्ररोग-
विनाशनाय निषेधम् निर्वसामीति स्वाहा ।

प्रसुद्धा त्रिलोकी यदीयोपदेशे,

यदीयेन बोधन शिष्ट न किञ्चिद् ।

प्रदीपं प्रदीपे महारत्नरूपे,

मुदाह जिन त यजे वासुपूज्यम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं तव कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिने द्राव मोहाभवा-
विनाशनाय दीपम् निर्वसामीति स्वाहा ।

इत येन कर्मादिभ्ये य प्रचण्ड,

पृथग् यमे यनाशरगोपयाम् ।

सुधूपन पाटीरचातग नित्य,

मुदाह जिन त यजे वासुपूज्यम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं तव कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिने द्राव षष्टकर्म-
विनाशनाय धूपम् निर्वसामीति स्वाहा ।

समीचीनबोध समीचीनदर्शि,

समीची-पूज समीचीन मौत्स्यम् ।

लवङ्गादिषुर्दमहारुद्ररूपे,

मुदाह जिन त यजे वासुपूज्यम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं तव कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिने द्राव मेक्षकचक्रसप्त-
फलम् निर्वसामीति स्वाहा ।

धृता येन कांता महावृत्तितः

महासीलरुद्रात्कृतः

जलाद्येन रभ्येण रग्दादिभिः

मुदाह विव दृक् सत्त्वः १३ १

ॐ ह्रीं तप कल्याणकमण्डितय श्रीगणेशाय नमः ॥
अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्टाष्टक

फाल्गुने कृष्णपक्षे च शुक्लपक्षे च

किञ्चिन्निमित्तमासाद्य वैष्णवः १३ २

लौकान्तिक महादेव इत्येवम् १३ ३

देवयानमधिष्ठाय प्राक्तनैः १३ ४

पञ्चमुष्टिमिरुत्पात्र्य पूर्ववत् १३ ५

सिद्धेभ्यो नम इत्युक्त्वा १३ ६

दीक्षाकाले महावान् शुभः १३ ७

इत्थचतुर्णिकायेनामरवृत्तः १३ ८

वासुपृज्यजिनं चापे मन्त्रः १३ ९

नीरचन्दनशालेय शुभः १३ १०

धूपे फलैश्च सृष्टेन मन्त्रैः १३ ११

कुर्यान्मे पापसंहार वाक्ता १३ १२

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णवतुर्वैशख १३ १३
जिने द्वाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति ॥

जयमाला ।

नो नित्यं जगतीतले किमपि हा हा विद्यते कुत्रचित्,
 सर्वं कालकरालकण्ठकलितं सर्वत्र सदृश्यते ।
 इत्थं भोगशरीरशु यद्दृश्यते यं काननघ्वातपत्,
 तं वदे वासुपुञ्ज्य राजतनय गक्त्या सदाह मुदा ॥१७॥

अग्निष्णी-उद ।

कारणं किञ्चिदामाद्यं ससारतः,
 सपिरागं दधी मुक्तिरामोत्सुकः ।
 देव लौकान्तिका भागवा भक्तितो,
 मावनाढ्यादर्शो पट्टरानन्दतः ॥ १८ ॥
 नास्ति किञ्चित्सदा शाश्वतं भूतले,
 नास्ति रक्षा यत्र नश्यती देहिनः ।
 नास्ति किञ्चित्सुखं भूतले माविना,
 विन्दत ह्येक एवाद्युत्तमं सन्ततम् ॥ १९ ॥
 चेतनो भिन्न एवास्ति ना देहता,
 विद्यते देह एवोऽशुचिर्भद्रः ।
 मोहनिद्रावशाः कुर्वते ह्यास्रव,
 युस्मितो जायते कर्मणा सरः ॥ २० ॥
 निर्जेरा जायते सत्तपो धारणात्,
 अत्र लोके सदा भ्रम्यते चेतनः ।

दुर्लभो वर्तत बोधि लाभो महान्,

धर्म ष्वास्ति नो बधुगव धु ॥ २१ ॥

देव लौकान्किा स्वर्गलोक गता ,

भावना द्वादशी मीरयित्वा सुखम् ।

भावनव्यन्तर ज्योतिष स्वर्गजा,

देवलोकास्तदा ह्यागता मोदत ॥ २२ ॥

रत्नजातोद्यिन यापयान तत ,

दवता निर्मम विक्रियाश्चित्तः ।

श्री जिनस्तन मयातवान्कानन,

तत्र केशान्निजापाटयित्वा क्षणम् ॥ २३ ॥

फाल्गुने मासके श्यामले पक्षक,

दर्शकोपातिकाया तिथी मोदत ।

ओन्नम सिद्धमुच्चार्य दीक्षाश्रिता,

तत्पुण्य ज्ञानगामादित तुर्यकम् ॥ २४ ॥

भ्रुसियतान्मूर्धजा निद्र आदत्तवान्,

धारयित्वा शुमान् रत्न सद्भाजने ।

मोदत क्षिप्रान् धीरपाथोनिर्धा,

देवदेवीयुतो नाकमायातवान् ॥ २५ ॥

भूरिशो भ्रुसुजो दीक्षिता सत्तर,

तेन सार्धं सदा मोक्षलक्ष्म्युरसुकाः ।

तैर्युतः श्रीनिनो वासुपूज्यो वर्मा,
 कल्पवृक्षैर्युतो महशैलो यथा ॥ २६ ॥

ध्यानयोगादपो सुन्दरक्षमापते,
 सद्गृह भोजननाथ मादक्षरान् ।
 देव वृ दैस्ततो रत्नवृष्टि कृत्वा,
 तद्गृह व्योमशः सपवाताङ्गणे ॥ २७ ॥

सत्तपोमङ्गल लोकयित्वा सदा,
 श्रीपत श्रीजनो घ-पामाग्योऽभवत् ।
 पूजया साम्प्रत माग्यव तो वय,
 जातवन्त, स्वय श्रीजिनक्षमापते ॥ २८ ॥

प्रमदागच्छ इ (हिन्दी गीतिका) ।

अथ मुक्ति सुप्रमदाननाञ्ज पडह्निमाहितशर,
 शुभकीर्तिसारमितीकृत्वाखिललोकसु-दामन्दाम् ।
 दिविजादि मर्त्य स्वमे-द्र भूवरचित्त कजविगाकर,
 वसुपूज्य राजतनूमत्र प्रणमाम्यह वदतावाम् ॥ २९ ॥

ॐ ह्रीं तप कल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन-द्राय नमार्थ
 निर्वणामीति स्वाहा ।



श्रीवासुपूज्य जिन ज्ञानकल्याणक पूजा ।

हे काष्ण्यमहोदधं गुणनिधे सत्प्रोतिशयोनिधे,

सद्वेषा द्विमद्विलोलितजगत्काष्ठावध सुदूषिधे ।

पादाब्जानत देवमाल विलसत्सत्कीर्तिमाल प्रभो,

श्रीमन् हे वसुपूज्यजात जिनप प्रोद्धाम्यास्मानित ॥१॥

मसाराक्ष्यपयोनिधेऽवितरां दु स्याम्ममा ममृतात्,

नानायोनिममुत्पन्नीवनिचयै र्पादोभिर त प्लुतात् ।

मग्नो-मग्नतया क्षिरेण नितरां सपीडिता मो विभो,

सोदामोऽत्र ततो विनम शिमा कुर्म पुन प्रार्थनाम् ॥२॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिन द्र । अत्रावतगवत्तर
सम्बोधत् ।

ॐ ह्रीं न नकल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिनन्द्र । अत्र तिष्ठ तिष्ठ
उ ट ।

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिन द्र । अत्र मम सखि
दितो मन भव वषट् ।

स्वागद्गादिसन्धीरे काञ्चनामत्रमस्थिते ।

वासुपूज्य जिन चाय ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डित श्रीवासुपूज्यजिनद्राय वन-
जाम् पुविनाशनाय जल निर्वणामीति स्वाहा ।

पाटीरैः कुङ्कुमोदृष्टीर्गन्वा-धीकृत पटपदैः ।

वासुपूज्य । ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय समार-
तार विनाशनाय चन्दनम् निर्वहामीति स्वाहा ।

शाम्पेयैस्तण्डुले रम्पैरखण्डै शशिसुन्दरै ।

वासुपूज्य जिन चाये ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय अक्षय-
पद्मासये अक्षय निर्वहामीति स्वाहा ।

शाम्पेय कु दजात्याद्यै लता-तेर्मिलितालिभिः ।

वासुपूज्य जिन चाये ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय काम-
बाणविनाशनाय पुष्पम् निर्वहामीति स्वाहा ।

आज्यसारेण चरुणा विविधन सुगन्धिना ।

वासुपूज्य जिन चाये ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय सुषारोग-
विनाशनाय नैवेद्यम् निर्वहामीति स्वाहा ।

घृतोद्भवेन दीपन प्रकाशित दिशा सदा ।

वासुपूज्य जिन चाये ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय मोहा घकार-
विनाशनाय दीपम् निर्वहामीति स्वाहा ।

धूपन दिव्यरूपेण गन्धमतापितालिना ।

वासुपूज्यजिन चाये ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय अष्टकर्म
विनाशनाय धूपम् निर्वहामीति स्वाहा ।

माकन्दनारिकेलाद्यै सत्कलै रसनाप्रियै ।

वासुपूज्यजिन चाय ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनद्राय मोक्षकृ-
मःसप्त फलम् निर्व्वामतीति स्वाहा ।

नीरपाटीर शालेष सुमार्द्यैर्मिलितैर्मुदा ।

वासुपूज्यजिन चाय ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय अनर्घ-
वद्रमासय नार्घ्यम् निर्व्वामतीति स्वाहा ।

माघे मासे मिते पक्षे द्वितीयाया तिथौ तथा ।

निहत्य घाति कर्माणि प्राप्त यन चतुष्टयम् ॥ १२ ॥

ज्ञानदग्धवीर्यमौर्यानामनन्ताना महस्विनाम् ।

दयन्द्राज्ञा समारभ्य धनदेन विनिर्मित ॥ १३ ॥

द्वादशममासयुक्तो नृपुत्रामुरसेविते ।

स्थित्वा समवसरणे दत्त यनोपदशनम् ॥ १४ ॥

प्रातिहार्याष्टकोपेत ज्ञानकल्याणकाञ्चितम् ।

वासुपूज्य जिन चाये पूर्णार्घ्येण महोत्सव ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वितीयाया केवलज्ञानप्राप्तये श्रीवासुपूज्य-
जिनद्राय पूर्णार्घ्ये निर्व्वामतीति स्वाहा ।

जयमाला ।

यस्य ज्ञानदिवाकरेण दलित ध्वान्त तत सर्वतो,

नो लेभे वसुधातले कश्चिदपि स्थान भ्रमत्सततम्

लोकालोकपदार्थयोषनकर सद्देशनातत्पर,

त व दे वसुपूज्यराजतनय भक्त्या सदाह मुदा ॥ १६ ॥

अनुष्टुप् ।

माघमासे सिते पक्षे द्वितीया सन्निर्धा तथा ।

विशाखक्षे तपोऽण्ये नीपानोकह सचले ॥ १७ ॥

ध्यानमग्नो जिनो भूत्वा तस्यौ निश्चलविग्रहः ।

नामाया दृष्टिमाघाय क्रोडस्थापितपाणिक ॥ १८ ॥

अर्धो-मौल्लमचक्षुः शनैरारब्धप्राणनः ।

आत्मानमात्मनाध्यायन् सुस्वियरीकृतमानस ॥ १९ ॥

अमासीद् वासुपूज्योऽपी सुरशूलनिमस्तदा ।

श्वकथेणिमारुह्य शृङ्गध्यानप्रशापत ॥ २० ॥

मोहकर्मक्षय कृत्वा क्षीणमोहोऽभवत्क्षणम् ।

इत्वा घातित्रय पश्चादवासज्ञानपञ्चमः ॥ २१ ॥

लोकालोकपदार्थज्ञो रश्मिमालीव मामिजः ।

सयोगकेवालिप्रख्य स्वयोदशगुणस्थित ॥ २२ ॥

चतुर्णिकायदेरेषु क्षोमोऽधूदामनक्षतेः ।

सौधर्मेन्द्र समाहूय घनद निदिदेशतम् ॥ २३ ॥

वासुपूज्यजिनोऽद्याभूत्केवलज्ञानलोचनः ।

रक्षयाशु समां तस्य सु दराकारशोभिनीम् ॥ २४ ॥

यस्येश्वरः क्षितिं प्राप्य निर्मम गगने समाम् ।

विक्रियाशक्तितो दिव्या विविधाकारभासिनीम् ॥ २५ ॥

क्वचित्साल क्वचित्त्वात् क्वचिदाभ्राद्यनोक्ता ।
 क्वचित्प्रताका रम्यामा क्वचिन्नर्तनशालिका ॥ २६ ॥
 मानस्तम्भा विमामन्ते क्वचिदाकाशचुम्बन ।
 रत्नराजिविनिमाणा ष्टैरथविमामिन ॥ २७ ॥
 मन्थे मन्थद्वृटीपथे जिनः श्रीरासुपूज्यक ।
 विद्यमानोऽमरद्विष्वग् समा द्वादश मासिठा ॥ २८ ॥
 जयत्रयः शनि कुर्वन् निलिम्बाना समुद्यय ।
 व्योमपाना यधिष्ठाय व्योममार्गात्समागत ॥ २९ ॥
 स्तनप्लुविभ्राजी पादपोऽशोकमजित ।
 अभरणं निननायस्य शृगुमे वातयपित ॥ ३० ॥
 मिहापत् महोत्तुङ्ग नानारत्नमनोहरम् ।
 जिनाधिष्ठितमामामीत्यूर्वा, यगिरिर्वथा ॥ ३१ ॥
 छत्रप्रय बन्धाम रत्नरानिविमासरम् ।
 शोषं मगवतोऽमामीघट्टत्रितय सन्निभम् ॥ ३२ ॥
 मामण्डल प्रमामार पाममृत विमाकरम् ।
 जिननाथ ममीपऽमाद् मव्यज्र तु विष्णुणम् ॥ ३३ ॥
 सर्वाङ्गैर्व्यो जिनन्द्रस्य दुन्दुमिघानमस्त्रिम् ।
 नि ममार घवनी रग्यो लोकप्रयदितप्रद ॥ ३४ ॥
 मिलिन्द मिलिता वित्र मन्दागाद्रि महीरुडाम् ।
 वृष्टिर्षमूर पुष्पाणा निलिम्बरगतपातित्ता ॥ ३५ ॥
 यक्षेराधूपमानानि चामराणि वमामिर ।
 जिनराज यथासीव प्रसृतानि समन्तत ॥ ३६ ॥

देवदुन्दुभिर्भनादो रोदसीं व्याप सुन्दरः ।
 'एषोहि मन्व' इत्येव कूर्वाणः प्रेरणां उणाम् ॥ १७ ॥
 प्रातिहार्याष्टकोपेतोऽनन्तरादिमासितः ।
 वासुपृथ्व्यजिनश्चन्द्रे मत्तत्त्वावगासनम् ॥ ३८ ॥
 दिव्यापदेशन मन्वजीव षड्याणकारकम् ।
 श्रुत्वा सुरासुराः सर्वे तिर्यञ्चो मनुनाम्नया ॥ ३९ ॥
 धर्मरूप प्रविष्टाय ऐगिर परमां मुदम् ।
 अश्रममार्थेनां श्रुत्वा विष्णुहार मिनो सुवि ॥ ४० ॥
 नमोमार्गण पाथोजी र्ववृष्टि विनिर्मितैः ।
 सुगन्धिमिर्महारथ्यै पक्तिरूपेण सस्थितैः ॥ ४१ ॥
 छानकल्याणक कृत्वा देवा स्वर्गं प्रपदिर ।
 मातृयाः परमामोद लभिर तस्य दशनात् ॥ ४२ ॥
 दिव्यास्थानस्थित देव स्मार स्मार स्तुवति यः ।
 ते लभन्त महापुण्यं स्वर्गमोक्षसुखप्रदम् ॥ ४३ ॥

मालिनीचन्द्रम् ।

जयति जनसुवन्द्यथियमत्कारनन्याः,
 अमसुरवरक-दोऽशास्तकर्मागिष्टि द ।
 निगिन्मुनिगरिष्टि कीर्तिमत्तावरिष्टिः
 सकलसुरपूज्य श्रीजिनोवासुपूज्य ॥ २४ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकमण्डित्वाय श्रीवासुपूज्यजिन द्वाय महार्थं
 निर्धशमीति स्वाहा ।

निर्वाणकल्याणकमण्डित श्रीवासुपृज्य जिन पूजा ।

शुक्ल यानकृपाणखण्डितरिपुः स्वाधीनता प्राप्नुवन्
 स्वच्छाकाशनिकाशचेतनगुण चामाद्य यं म्वा ॥ १ ॥
 लेमऽनन्तमनस्वर सुखवर स्वात्मोद्भव स्वात्मनि
 त व द वसुपृज्यराजतनय भक्त्या मुदा मन्त्रन् ॥ २ ॥
 घम तातलकाच्छन्द ।

ह वासुपृज्य जिनराज महामुनी त्र
 मञ्जन्तमत्र भववारिनिधी दयालो ।

टत्त्वावलम्बनमत कुरु मा विदू
 मुक्त्वाभव तमिह क शरण त्र ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री व
 त्तावतर सवौषट् ।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री
 तिष्ठ ठ ट ।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री
 सनिहितो भव भव वषट् ।

पञ्चचामरच्छ द (दि)

मुनी द्रचित्तशीतलेन सु-दारण क
 सुवर्णकृष्णसमृत्तन निम्न ॥ ४ ॥

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपुत्र्यजिन द्राय ज म-

नशासृःपुविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

सुशीतलेन चन्दनेन भृङ्गसङ्घधारिणा

विशालतापहारिणा मन प्रमादकारिणा ।

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपुत्र्यजिन द्राय समा-

तापविनाशनाय च दानम् निर्वपामीति स्वाहा ।

शशिप्रभेण तण्डलेन दिव्यसन्धारिणा

अखण्डिमन मञ्जुलेन चित्ततोषकारिणा ।

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपुत्र्यजिन द्राय कक्षप

पदमास्रपे अक्षतम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मनोसुमालतीपयोत्तवारिजातपुञ्जकै

स्वग घमारमोदितद्विरेकराजवृन्दकै ।

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपुत्र्यजिन द्राय काम-

नविनाशनाय पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सुवर्णमाजनस्थितैरमन्दबोधकारके-

निवेद्यैर्घृताप्लुतैः सिताममृद्विधारकैः ।

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणरक्षणरुमण्डिताय श्रीवासुपुत्रजिन द्राय शुभा

रोग विनाशनाय नैपेद्यम् निर्वणमीति स्वाहा ।

प्रभा षयप्रमासिमिदिनेशदीप्तिधारिमि ।

सुदीपकजने क्षण ममसामोद्धारिमि ॥

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणरक्षणरुमण्डिताय श्रीवासुपुत्रजिन द्राय माहा-ष

काशविनाशनाय दीपम् निर्वणमीति स्वाहा ।

सुवन्द्रचूर्णपुष्टिते सुगन्धिमि ममन्धिते-

सुधूरकर्वशीकृतालिभारगजिराजिते ।

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणरक्षणरुमण्डिताय श्रीवासुपुत्रजिन द्राय अष्ट

कर्मविनाशनाय धूपम् निर्वणमीति स्वाहा ।

सुमातुलिङ्गनारिकेल माषकादि मत्फलैः

स्वगन्धतोपिताखिलैर्मगोदरे सुनिर्मलैः ।

यतीन्द्रवृन्दवन्दित सुरेन्द्रमहानन्दित

जिन यजामि द्वादश जयावतीसुत हितम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकस्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिन द्राय मोक्ष
फलमाप्तये फलम् निर्वाणामीति स्वाहा ।

सुनीरघ दनाथतः प्रमूनदीपधूपने-

निरेद्यमत्फलैर्महामन प्रमोदस्त्वणै ।

पतीन्द्रश्च दण्डित सुरन्द्रसङ्घनन्दित

जिन यत्रामि ढादश जयावतीसुत हितम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकस्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजि- द्राय अ र्घ
पदमाप्तये अर्घ्यम् निर्वाणामीति स्वाहा ।

भाद्रमास मितपक्षे पञ्चन्द्रकयान्विते ।

चतुर्दश्या तिथौ येन मन्दागार्तो मनोहरे ॥ १२ ॥

इत्वा कम एक प्राप्ता मोक्षन्दमीरन्दवरी ।

चतुर्विधामरैर्यस्य पूजा निर्वाणकालजा ॥ १३ ॥

कृता भक्त्या समागत्य साटोपा सुदृढप्रदा ।

वासुपूज्य जिन चाय तमह भक्तिमयुत ॥ १४ ॥

नीर पाटीर शालय लतान्तार्थैर्मनाहरे ।

रोहिण्यारपत्रतस्यास्मि जुघापनमह मुदा ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मास निर्वाणकस्याणकाय व सु-
पूज्याजिनाय पुणार्थि निर्वाणामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

य सज्ज्ञानविभूषित सुरक्षया अर्धन्ति य सन्तत ।

धरस्तो येन मनोमग्नो पुष्वजनो यस्मै सदा तिष्ठते ॥

यस्मान्मोहपरम्परा विगलिता यस्यास्ति दासो जगत् ।

यस्मिह्नीनतमो विकल्पनिचयस्त वासुपूज्य मजे ॥ १६ ॥

सोलाकउत्र (२४ मात्रा)

भूदावानलमय तपितज्जनी नमस्त ।

कर्माण्य कृठार कामकरिर्मिह नमस्त ॥

मोहतमोदिनाथ जगज्जननाथ नमस्त ।

वासुपूज्यजिनदेश देवकृतमत्र नमस्ते ॥१७॥

माद्रावान्तदिग दग्वास्त्रिकर्ममहावन ।

प्राप्तानतचतुष्टयादिगुणपुञ्ज महावन ॥

मुक्तिपामुलकञ्जकजिज्जनीत मीत्यवन ।

वासुपूज्यजिनराज नमति दुर्मितीष निरुदन ॥१८॥

एकमाम इदग्निष्ठ आपुषो यदा यभूव ।

कृत्वा योगशिराधमत्र गतमतिर्भूव ॥

मन्दारारयगिरी ध्यानम्यिरमना यभूव ।

शुक्लध्यानप्रताप दग्धकर्मा य यभूव ॥१९॥

धुग मुक्तिवद रमणीरमणो जातो देव ।

धुग मशानलताररर्जितो जातो देव ॥

धुग शुद्धचिद्रूपधारको जातो देव ।

धुग विगृह्णाकाश मनिमो ज तो देव ॥२०॥

वासुपूज्यजिनवरो बन्धनादद्य विमुक्त ।

श्रुत्वायातो देवचयो निरसङ्गपुक्त ॥

नस्रकेशानादाय कृत्रिम वपुश्चकार ।

अनलापामुच्छ्वादादमाशोऽनलचकार ॥ २१ ॥

वासुपूज्य जिनदेश दाहममरेशः कृत्वा ।

मृत्तिकैर्निचगात्रमत्र परिलभित कृत्वा ॥

तस्य गुणावलि चिन्तनेऽपदु चित्त कृत्वा ।

स्वप्नगाम मह दधममूर्धैर्लास्य कृत्वा ॥ २२ ॥

धम्पापुर निकटस्थमचलमुत्कृष्टाकारं ।

पूजयन्ति सुरमर्त्येषु पुषमहिताकारम् ॥

म दासाद्रथारयानगनोन्न पुष्पाधार ।

पूजयामि वधमत्र धृगर्शितारधारम् ॥ २३ ॥

ह वासुपूज्य जिनराज बन्धनान्मुक्त कुरु माम् ।

ममतासौख्यनिधानमत्रगुणमिह कुरु माम् ॥

भुञ्जे दु खारलीमत्र भवसिन्धो पतित ।

कर्ममहारिपुंस दशस्यनिचयेन विदलित ॥ २४ ॥

दयासिन्धुमिहितो भवानममवचनाथे-

लोकत्रयकल्याणकारका धृतसुरसार्ये ॥

पन्नालाल विममवानन्म य पतित ।

निष्कामप जिननाथ कर्मरिपुचक्रविदलितम् । २५ ॥

मग्दाका ताच्छ ६ ।

कामञ्जाला प्रथमनपदु जेश्याद् ब्रह्मचारी ।

राज्य प्राप्य तणमिव तथा यो मुमोषात्मतस ॥

स्मार स्मार मुनिरपि मवन् मुक्तपमामिनी य ।

मद्वृत्तारयामरणनिचय दत्तचित्तो बभूव ॥ २६ ॥

सोऽय देवो पुषजनमनस्तोपकारी मम-तात्

मतापऽस्मिन्पतितममस्वामि ब-द्यात्पि युग्मः ॥

पन्नालाल दुरितनिन्द्य मुक्तिकान्तात्सुक मां

कुर्यात्तीर्णं भवजलधितो दु खमङ्गलयुक्तात् ॥ २७ ॥

श्रीं निर्वाणकल्याणकण्ठिष्ठाय श्रीवासुपूज्यजिन दाय महार्थे नि० ।

अद्विष्टुच्छन्द ।

अविनाशी गुणवृन्द विमामी शिवपति-

मोहनिमित्तवितरणिरमरपतिमपुतः ।

भवदावानलदाहदमनाजनीकरी

वासुपुण्यनिनवरो जपति गुणमपुतः ॥

(इसक बाद नाच लिला हुआ ह्यो मत्र को करने हुए प्रतिमाजीके अगे यालीमें कलघारा छोड़ना चाहिये और अग्निमें धूर भी लेने रहना चाहिये ।)

शान्तिमन्त्रः ।

ॐ नमो सिद्धेभ्य । श्री वीतरागाय नम । ॐ नमोऽस्मिन्ने
मगवते धीमते धी पादर्वतीर्थकराय, द्वादशगणपरिवेष्टिताय,
गुह्यस्यानपवित्राय, सर्वज्ञाय, स्वयम्भुव, सिद्धाय, बुद्धाय, पामा
रमन पामसुखाय, त्रैलोक्य महीव्याप्त्याय अनन्त समाचक्र-
परिमर्दनाय, अनन्तदर्शनाय, अनन्तवीषाय, अनन्तसुखाय,
त्रैलोक्यवशकराय, मत्पञ्चानाय सत्यत्रयण धरणे द्रुक्गामण्डल
मण्डिताय, ऋष्यार्षिकोत्थावक प्राविश्या प्रभुव चतु मङ्गोपमर्ग
विनाशाय, घातिकर्मविनाशाय, अघातिकर्मविनाशाय । अपनाह-
भस्माक छि द० विन्द० । मृत्यु छि द० मि द० । अतिकाम
छि द० मि द० । रतिकाम छि द० विन्द० । क्रोध छिन्द०
भिद० । अग्नि छिन्द० मि द० । सर्वशत्रु छि द० विन्द० ।
सर्वोपमर्ग छि द० मि द० । सर्वसिद्ध छि द० विन्द० । सर्वभय
छि द० मि द० । सर्वराजमय छि द० मि द० । सर्वचोरमय
छि द० मि द० । सर्वदुष्टमय छि द० मि द० । सर्वमृगमय
छि द० मि द० । सर्वपाप य छि द० मि द० । सर्वमामयमय

छिदर मिदर । सर्वशूलमय छिन्दर मिन्दर । सर्वक्षयरोग
 छिदर मिन्दर । सर्वकुष्ठरोग छिन्दर मिन्दर । सर्वज्वर रोग
 छिन्दर मिन्दर । सर्वगजमार्गी छिदर मिन्दर । सर्वाश्व-
 मारी छिदर मिन्दर । मवगोमारी छिन्दर मिन्दर ।
 सर्वमक्षिपमारी छिन्दर मिन्दर । सर्वषायमार्गी छिदर मिन्दर ।
 सर्वधृशमारी छिन्दर मिन्दर । सर्वशुल्ममारी छिन्दर मिन्दर ।
 सर्वपत्रमार्गी छिन्दर मिन्दर । सर्वपुष्पमारी छिन्दर मिन्दर ।
 सर्वफलमार्गी छिन्दर मिन्दर । मवगाष्टूमारी छिन्दर मिन्दर ।
 सर्वदेशमार्गी छिन्दर मिन्दर । सर्वत्रिपमार्गी छिन्दर मिन्दर ।
 सर्वभ्रूराग छिन्दर मिन्दर । सर्ववृत्तानशास्त्रिर्नामय छिन्दर
 मिन्दर । सर्ववेदनीय छिन्दर मिन्दर । सर्वमोडनीय
 छिन्दर मिन्दर । ॐ तुदशा षडागज चक्रविक्रमतजोषल
 शौर्यशान्ति कुरु कुरु । सर्वनागानन्दन कुरु कुरु । सर्वमव्या-
 नदन कुरु कुरु । सर्वगोकुलानदन कुरु कुरु । सर्वप्रामनगरखेट
 खर्वट महम्बर पत्तन शोणामुग्र महानदन कुरु कुरु । सर्वलोका-
 नदा कुरु कुरु । सर्वदेशानदन कुरु कुरु । सर्वयजमानानदन
 कुरु कुरु । इति इति दद दद पच पच कुट कुट शीघ्र व्याधि
 व्यमनवर्जित अमय क्षेमारोग्य स्वास्थ्यस्तु, श्वातिरस्तु शिव
 मस्तु, कुलगोप्रघन धाय सदास्तु, चन्द्रप्रम, वासुपूज्य, महि
 वर्धमान, पुष्पदत्त, शीतल, मुनिसुवत, नमिनाथ, पार्श्वनाथ,
 परम देवाः सदा शान्तिं कुरुतु कुरुन्तु इति स्वाहा । " वद्भूत "

(इस समय यजमानका चादिय कि वह अपने मतेयापनक इत्ये
 शक्ति अनुभूत चार प्रकारका दान करे । इसके बाद पुष्पाञ्जलि वेणु
 कात हुए शान्तिगात्र बोले ।)

शान्तिपाठः ।

वाघवच्छन्दः ।

शान्तिजिन शशिर्मन्त्रवक्त्र शीलगुणप्रतसपमपात्रम् ।
 अष्टशतार्चितलक्षणगाम नोमि जिन सपमभुजनेत्रम् ॥ १ ॥
 पञ्चममोष्मिठच्छराणा पूजितमिन्द्रनेत्रगणेश्च ।
 शान्तिकर गण शान्तिममीषु षोडशतीर्थकर प्रणमामि ॥ २ ॥
 दिव्यतरु सुपुष्पसुशृष्टि दुन्दुभिगामा योत्रा घोषो ।
 आठपरागणचामायुग्म यस्य विभाति च मण्डलतंत्र ॥ ३ ॥
 त नगर्धित शान्तिजिन इ शान्तिकर शिखा प्रणमामि ।
 सर्वगणाय तु दच्छतु शान्ति मद्यम पठतु परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलवाच्छन्दः ।

येऽभ्यर्चिता मुहुःकुण्डलहारतनैः ।

शक्रादिभि सुगणै स्तुतपात्पथा ॥

त म विना प्रवरवज्रजगत्प्रदीपा

स्तीर्थकरा सतत शान्तिकाम भवतु ॥ ५ ॥

वसन्ततिलवाच्छन्दः ।

मपूजकाना प्रतिपात्कानां यतीन्द्र माम न्यतपीषनानाम् ।

दशस्य गद्यस्य पुरस्य राध करोतु शान्ति मगधान् जिनन्द्र ॥ ६ ॥

वसन्ततिलवाच्छन्दः ।

शेम मयेप्रचाना प्रभवतु बलयान् धार्मिको भुविपाल

काले काम च मयो विक्रान्तु मलिल व्याधयो यान्तु नाशम् ॥

दुर्मिथु चौरमारी क्षणमपि जगता मास्मभुञ्जीवलोक ।

जैन इ धर्मवक्त्र प्रभवतु सतत सर्वमौग्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अत्रपुष्प-प्रद्वस्तपातिर्माणि केवलज्ञानमास्करा ।

कुर्वन्तु जगत शान्ति पृथमाद्या जिनेश्वरा ॥ ८ ॥

प्रथम कारण पाण द्रव्य नमः ।

मन्त्राक्तात्ताच्छब्दः ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः मङ्गुतिः सर्वदायै
सद्वृत्ताना गुणगणक्याशेषवादे च मौगम् ।
सर्वस्यापि प्रियद्वितवचो भावना चात्मतन्व
सपद्यन्तं मम मन्त्रमय याददतेऽरर्गः ॥ ९ ॥

आर्याच्छब्दः ।

तवपादौ मम हृदय मम हृदय तव पद्मय लीनम् ।
रिष्टतु जिनन्द्र तावधावध्विर्वाणमप्राप्ति ॥ १० ॥
अक्षरपपरथहीण मत्ताहीण च ज मए मणिय ।
त खमठ णाणदेव य मञ्जयि दुवखका य दितु ॥ ११ ॥
दुवखयखजो कर्मकस्रजो समाहिम ण च घोहिलाहाय ।
मम होउ जगद्वर्धय निणवर तर चणमणोण ॥ १२ ॥
(१६के वा १ क इ म्नुति योत्तम एए म्पट की तीन प्र २१ण ए दो)

विमर्जनपाठः ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्राक्त न हृत मया ।
तत्सर्वं पूर्णमयास्तु त्व समादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वान नैव जानामि नैव जानामि पूजयम् ।
विमर्जन न जानामि धमस्य परमेश्वर ॥ २ ॥
मन्त्रहीन क्रियाहीन द्रव्यहीन तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यता देव शरत्तज्जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरादेश लब्धमागा यथाक्रमम् ।
तेमथाभ्यर्चित्ता मक्तया सर्वे या तु गथास्थितिम् ॥ ४ ॥
(१६के वा १ वा १ म्मोकार मात्रया जप करे विर म्दिगमे

